उड़न तश्तरियां

उड़न तश्तरियाँ

विद्यासागर

एस० चन्द एण्ड कम्पनी लि०
रामनगर, नई दिल्ली-110055

एस० चन्द एण्ड कम्पनी लि०

मुख्य कार्यालय : रामनगर, नई दिल्ली-110055

शोरूम : 4/16 बी, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002

शाखाएँ

महावीर मार्केट, 25, ग्वाइन रोड, अमीनाबाद, लखनऊ-226001

माई हीरां गेट, जालन्धर-144008

285/जि, विपिन बिहारी गांगुली स्ट्रीट, कलकत्ता-700012

152, अन्ना सलाए, मद्रास-600002

सुल्तान बाजार, हैदराबाद-500195

3, गांधी सागर ईस्ट, नागपुर-440002

ब्लैकी हाउस, 103/5, वालचन्द हीराचन्द मार्ग, बम्बई-400001

के० पी० सी० सी बिल्डिंग, रेसकोर्स मार्ग, बंगलौर-560009

खजांची रोड, पटना-800004

613/7, महात्मा गांधी रोड, एर्नाकुलम कोचीन-682035

पान बाजार, गुवाहाटी-781001

एस० चन्द एण्ड कम्पनी लि०, रामनगर, नई दिल्ली-110055 द्वारा प्रकाशित तथा राजेन्द्र रवीन्द्र प्रिंटर्स (प्रा०) लि०, रामनगर, नई दिल्ली-110055 द्वारा मुद्रित।

१. भावी मानव

कभी-कभी ऐसा भी समय आता है जबकि मैं भविष्य के बारे में अनावश्यक रूप से निराशावादी हो उठता हूँ। मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि ऐसे अनेक अवसर आये हैं जब मैंने कसम खाई कि मैं काल के अध्ययन को अपना पेशा नहीं बनाऊँगा। मेरे घर की दीवारें रहस्य को समझानेवाली पुस्तकों से भरी हुई हैं, कालकवलित भंडारों के चूने में बार-बार टटोलने और छिपी हुई दरारों में लगातार खोज करने से मेरे हाथ फट गये हैं और खुरदरे हो गये हैं। मैंने मौत को इस कदर गौर से देखा है कि मैं खोपड़ियों के चेहरे में बसे उनके व्यक्तित्वों को पहचान सकता हूँ और उन व्यक्तित्वों के साथ विद्यमान रुचियों और अरुचियों को अनुभव कर सकता हूँ।

ऐसी एक खोपड़ी एक बड़े शहर के म्यूज़ियम में रखी हुई है। इस पर एक सादा-सा लेबिल लगा है, जिसमें लिखा है 'स्ट्रांडलूपर, दक्षिण अफ्रीका' (Strandlooper, South Africa)। मैंने किसी भी मनुष्य के चेहरे को इतनी देर तक नहीं देखा है जितना कि इस खोपड़ी की आकृति को। प्रायः न चाहते हुए भी मैं उस खोपड़ी की ओर खिचा चला जाता हूँ। यह एक ऐसा चेहरा है जो हमारे बचपन की काल्पनिक और चित्र-विचित्र कहानियों को वास्तविकता का रूप प्रदान कर देगा। इसमें, एच० जी० वेल्स की 'समय-यन्त्र' नामक पुस्तक के पात्रों का संकेत मिलता है—उन दयनीय और बच्चों जैसे लगने वाले लोगों का संकेत प्राप्त होता है जिनको वेल्स ने सुदूर भविष्य में, विनाश की ओर जाते हुए ग्रह के अन्तिम शहरों में विचरते हुए दिखलाया है।

लेकिन यह खोपड़ी समय-यन्त्र द्वारा किसी भावी युग से जिन्दा वापस नहीं लाई गई है। इसके विपरीत, यह सहस्रों वर्ष पूर्व भूतकाल की वस्तु है।

यह आधुनिक आदमी की भद्दी रेखानुकृति है; अपने आदियुगीन गुणों के कारण नहीं, बल्कि ऐसी आधुनिकता के कारण जो इस युग के मनुष्य से आगे की वस्तु है। तथ्य यह है कि यह खोपड़ी एक रहस्यमय भविष्यवाणी करती है और चेतावनी देती है। क्योंकि जिस क्षण मानव-विज्ञान का विद्यार्थी अपनी धारणाओं के अनुसार भावी मनुष्य की रूपरेखा बना रहा होगा, उस समय तक इस जीव को पैदा हुए सहस्रों वर्ष बीत चुके होंगे, वह इस पृथ्वी पर जीवन-लीला पूरी कर चुका होगा और मर चुका होगा।

हम, यानी आज के मनुष्य, अपने बारे में कुछ ऐसे कौतूहल से पीड़ित हैं, जो कभी तृप्त नहीं होता और हमें पुनः आश्वस्त होने की बहुत अधिक आवश्यकता है। हमारे उद्दाम आत्मविश्वास के नीचे भय छुपा हुआ है—यह भय उस भविष्य के प्रति बढ़ रहा है, जिसका अभी हम निर्माण कर रहे हैं। ऐसी आशंकापूर्ण मानसिक स्थिति में, हम अपनी रुचि की पत्र-पत्रिकाओं के पन्ने पलटते हैं और सीधे एक ऐसे पृष्ठ पर आ पहुँचते हैं जिस पर भावी-मानव का वर्णन दिया होता है।

इस प्रकार के वर्णन कभी निराशावादी नहीं होते, इन वर्णनों में बड़े प्रभावशाली आत्मविश्वास के साथ, मानवता की केवल एक किस्म का उल्लेख होता है—हमारी अपनी किस्म का—और ये वर्णन सदा ही बड़ी कुशलता के साथ हमारे अहं का पोषण करते हैं। यह एक सत्य घटना है कि मेरे एक प्रसिद्ध सहयोगी ने, जो इस प्रकार की भविष्यवाणियाँ करने में बड़े कुशल हैं, अपने ऊँचे ललाट के एक विशेष प्रकार से चित्रित सुकुमार रूप को ऐसे उदाहरण के रूप में उपयोग करने की अनुमति दे दी जिससे यह पता लग सके कि भावी मानव का संभावित रूप कैसा होगा। यहाँ तक कि उसमें मेरे सहयोगी के सिर का जो हिस्सा गंजा था, वह भी इस चित्रित रूप में ज्यों-का-त्यों बना रहा, क्योंकि आखिरकार भविष्य के मानव को तो निपट गंजा होना है।

मैं प्रायः विद्यार्थियों को यह चित्र दिखाता हूँ। यह चित्र देखकर वे बहुत ही आश्वस्त होते हैं। बड़े मस्तिष्क वाला कोई व्यक्ति उचित समय पर मानवता की रक्षा करेगा। वे मेरे मित्र के उस चित्र को देखते हैं, जिस पर लिखा हुआ है, 'भावी-मानव' और फिर कहते हैं, "यह बिल्कुल ठीक है कि कोई घटनाओं पर दृष्टि रखे हुए है। हमारे सिर बड़े और दाँत छोटे होते जा रहे हैं, देखिये न, ये देखिये!"

उनकी आवाजों में युवकोचित विश्वास की गूँज सुनाई देती है, उस विश्वास की, जिसे मेरे प्रेरणादायी सहयोगियों और मैंने उत्पन्न किया है। कभी-कभी मैं स्वयं भी उनकी चिन्तनोन्मुख उत्सुकता से भर उठता हूँ। मैं

उस विश्वास को, उस जोश को एक बार फिर पाना चाहूँगा, एक बार फिर ! मैं चाहूँगा तो, लेकिन.........

इस सम्बन्ध में केवल एक बात ऐसी है जिसकी चर्चा करने की हमें अभी हिम्मत नहीं हुई है । यह बात ऐसी है कि आप इस पर विश्वास नहीं करेंगे । यह सब कुछ पहले ही हो चुका है—पीछे, भूतकाल में । दस हजार वर्ष पहले बड़े मस्तिष्क और छोटे दाँत वाला भावी मानव पैदा हो चुका था ।

पर उसके बाद उसके विकास की क्या प्रगति हुई ? कुछ भी नहीं । संभव है उसका कुछ भी भविष्य न रहा हो । यदि उसका कुछ भविष्य रहा भी होगा तो वह दक्षिण अफ्रीका के किसी तट पर प्राप्त हड्डियों के छोटे-से ढेर में पाया जा सकेगा ।

इस पुस्तक के पाठकों में बहुत-से गोरी जाति के लोग होंगे । हम इस भावी मानव के बारे में यह सोचना पसन्द करते हैं कि वह भी गोरा मनुष्य होगा । इससे हमारे अहं की तुष्टि होती है । लेकिन मैं भूतकाल के जिस भावी मानव की बात कर रहा हूँ वह गोरा नहीं था । वह अफ्रीका में रहता था । उसका मस्तिष्क आपके मस्तिष्क से बड़ा था, उसका चेहरा सीधा और छोटा, लगभग एक बच्चे के चेहरे-जैसा था । वह विकास-क्रम की श्रृङ्खला का ऐसा अन्तिम जीव था, जिसके बारे में मानवविज्ञानशास्त्री बताते हैं कि, हम भी ठीक उसी ओर विकसित हो रहे हैं ।

कई विद्वानों के विचार में 'भ्रूणीकरण' प्रक्रिया उन मुख्य क्रियाविधियों में से एक है, जिसके द्वारा आधुनिक मनुष्य दस लाख वर्ष पहले के, अपने क्रूर पशु-रूप की केंचुल छोड़ कर बाहर आया, फलस्वरूप उसके बचपन की अवधि बढ़ी, और मस्तिष्क का विस्तार हुआ । भ्रूणीकरण (Foetalization) या शिशु-रूप में परिवर्तित होने का सीधा मतलब होता है, वयस्क अवस्था में भी उन शारीरिक विशिष्टताओं का बना रहना जो विकास-क्रम की किसी प्राथमिक स्थिति में वस्तुतः शिशु-रूप में थीं । इस प्राणी के परिपक्व स्थिति में पहुँचने पर इस प्रकार की विशेषताएँ तेजी से समाप्त हो जाती थीं ।

यदि हम आज के किसी वनमानुष के जीवन-क्रम का अध्ययन करें और उसके विकास की मनुष्य के साथ तुलना करें तो हम देखेंगे कि मनुष्य और वनमानुष अपने शैशवकाल में एक-दूसरे से जितने मिलते-जुलते होते हैं उतनी समानता परिपक्व अवस्था में नहीं पाई पाती । जैसा कि पहले देख चुके हैं कि पैदा होने के समय गोरिल्ला और मनुष्य के बच्चों के मस्तिष्क लगभग बराबर होते हैं । मनुष्य और गोरिल्ला के नवजात शिशुओं के चेहरे एक-दूसरे से बहुत अधिक मिलते हैं, लेकिन बड़े होने पर दोनों में इस प्रकार की समा-

नता कभी नहीं पाई जाती क्योंकि समय आने पर गोरिल्ला के बच्चे का शक्ति-शाली मुँह विकसित होकर बाहर को निकल आता है। उसके खोपड़ी के सीधे जोड़ जल्दी बन्द हो जाते हैं और मस्तिष्क में थोड़ी ही वृद्धि होती है।

इसकी तुलना में मानव-मस्तिष्क, पहले तो तेजी से बढ़ेगा और फिर लगातार धीरे-धीरे युवावस्था तक उसमें वृद्धि होती जायेगी। उसकी खोपड़ी के जोड़ वयस्क अवस्था में भी खुले रहेंगे। दाँत भी बाद में निकलेंगे। इसके अलावा मनुष्य में नर वनमानुष की कवच-जैसी खोपड़ी और अपने दुश्मनों से लड़ सकने की दूसरी विशेषताओं का विकास रुक जायेगा।

इसके स्थान पर मानव-शिशु के परिपक्वावस्था में पहुँचने तक उसके अपेक्षाकृत सारे दीर्घकालीन शैशवकाल में बचपन की चिकने मस्तिष्क वाली खोपड़ी पहले की ही तरह बनी रहेगी। उसके जबड़े अप्रकट रूप से माथे के नीचे लगे होंगे जिसमें वनमानुष के मांसपेशियों वाले बड़े-बड़े उभरे हुए भाग नहीं होंगे। बिना नली की जो विशेष ग्रन्थियाँ (Ductless glands) शरीर के विकास में बढ़ावा देती हैं या रुकावट डालती हैं, वे किसी अनजाने ढंग से मनुष्य के विकास की गति को कम करके उसकी जीवन-अवधि को बढ़ा देती हैं। हमारा बचपन निस्सहाय होता है और उसमें विशेष देखभाल की जाती है, परन्तु इसके कारण, मस्तिष्क को विकास के लिए अधिक समय मिल जाता है। और इसी का एक अप्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि मानव विकास की धारा, हमारे बड़े-बड़े जबड़ों वाले पूर्व पुरखों की वनमानुष-जैसी वयस्क-अवस्था की ओर बढ़ने के बजाय धीरे-धीरे दूसरी दिशा की ओर हटती चली गई।

आधुनिक मनुष्य अपनी वयस्क अवस्था में भी युवावस्था की-सी प्रसन्नता और चंचल मानसिक वृत्तियों के बहुत कुछ गुण बनाये रखता है। इसके विप-रीत बड़े नर वनमानुषों में युवावस्था का स्नेहशील और विनोदी स्वभाव लुप्त हो जाता है। अन्ततः उसकी भारी खोपड़ी के अन्दर एक ऐसा छोटा मस्तिष्क बन जाता है जो घोर जङ्गली और प्रायः चिड़चिड़ा होता है। यह संदिग्ध है कि हमारे मोटी खोपड़ी वाले पूर्वजों का अपनी प्रौढ़ अववस्था में जीवन के प्रति रुख आनन्दपूर्ण रहा होगा।

तो हम, आजकल के लोग, परिवर्त्तित शिशु हैं, यानी बच्चों-जैसे, परन्तु पूँछहीन बन्दरों की वंश-परम्परा के प्रौढ़ जीव हैं जिनकी आयु बढ़ गई है और जिनकी किशोरावस्था काफी समय तक चलती है। हम अपने युग और काल के सभ्य लोग हैं। हम मुलायम खाना खाते हैं और एक ऐस्किमो (ध्रुव प्रदेश के आदिवासी) का शिशु हमसे ज्यादा अच्छी तरह दाँतों का प्रयोग कर सकता है। हमारे छोटे होते जबड़ों में, हमारी अक्ल-दाढ़ के समाप्त होने के

चिह्न दिखाई देते हैं। हमारे मस्तिष्क, हमारी आँखों के ऊपर तक झुक आये हैं, और हम में से बहुत कम लोगों का, यहाँ तक हमारे पेशेवर लड़ाकों तक का भौंहों के ऊपर का उभार बाल-गोरिल्ला को प्रभावित कर सकने में समर्थ है। ये सब चिह्न हमारी खोपड़ियों के अधिकाधिक हल्के होते जाने और हमारे जबड़ों के कुछ और छोटे होते जाने की ओर संकेत करते हैं।

कल्पना कीजिये कि आधुनिक मनुष्य में इस प्रकार के परिवर्त्तन की प्रवृत्ति जारी है। कल्पना कीजिये कि हमारे मस्तिष्क-कोष्ठ की सामान्य औसत क्षमता दो सौ घन सेंटीमीटर और बढ़ गयी है तथा साथ-ही-साथ उसी अनुपात में हमारा चेहरा छोटा होता गया है। स्पष्ट है कि ऐसा होने पर हमारे मस्तिष्क और चेहरे के बीच परिमाणों का अनुपात, वर्त्तमान अनुपात से कहीं अधिक होगा। इसमें विरोधाभास होने पर भी हम बहुत-कुछ आज के अपने बच्चों जैसे दिखाई देंगे। बच्चों के चेहरे परिपक्वता के अन्तःस्रावी उद्दीपन (Endocrine stimulus) के प्रभाव से बहुत देर में स्पष्ट होते हैं। जब तक उनके शरीर में इस तरह का उद्दीपन नहीं होता, तब तक उनके चेहरे के परिमाण का अनुपात मस्तिष्क के परिमाण से कम रहता है। पहले के दक्षिण-अफ्रीकी मनुष्यों की भी यही स्थिति थी।

लेकिन नहीं, आप सम्भवतः आपत्ति करेंगे कि इस प्रकार की सभी बातें किसी-न-किसी रूप में सभ्यता पर निर्भर हैं और उसी से उत्पन्न होती हैं। मनुष्य का शरीर और उसकी संस्कृति, दोनों का एक-दूसरे पर नियंत्रण होता है। इस प्रकार कुछ हद तक हम अपने शारीरिक विधि-विधान के स्वयं स्वामी हैं। हमारे शरीरों में यह जो रहस्यमय परिवर्त्तन हो रहा है, आज उस सबका सार एक बात में निहित है और वह बात है, इस पृथ्वी पर उपलब्ध की हुई सर्वोच्च सभ्यता, हमारी यूरोपीयों की सभ्यता।

एक समय था जब मैं, इस सिद्धान्त में विश्वास करता था, पूरे दिल से विश्वास करता था। अभी भी जब मेरे सहयोगी का तपस्वी, ईमानदार और महान् चेहरा पर्दे से मेरी ओर ताकता है तो कभी-कभी मुझे विश्वास होने लगता है कि यही बात युक्तियुक्त है। इस चेहरे में मेरी अपनी जाति के मानवों की रेखाएँ हैं। लेकिन अब मैं जान गया हूँ कि यह न तो सबसे अधिक परिवर्त्तित शिशु की जाति का है और न सबसे बड़े मस्तिष्क वाले मनुष्य का। ऐसे मनुष्य के बनने-बिगड़ने का खेल, पहले ही, लिखित इतिहास के प्रारम्भ से भी पहले, खेला जा चुका है। यह खेल संसार के ऐसे एकान्त-शान्त स्थान पर खेला गया जहाँ कोई कभी नहीं आया था, जहाँ मानवों के झुण्ड पत्थरों को उसी तरह तराशते थे जैसे कि हमारे पुरखों ने उत्तर की ओर यूरोप में उस समय तराशे

थे, जबकि विशाल बर्फानी चादरों की भारी तहें धरती पर फैली हुई थीं ।

ये लोग सभ्य नहीं थे, गोरे नहीं थे । लेकिन वे सभी बड़ी-बड़ी बातों में शारीरिक दृष्टि से भावी मानव से मिलते थे । उन्होंने अपना यह दर्जा एक असभ्य मनुष्य के कच्चे और आदियुगीन भोजन पर निर्भर रह कर प्राप्त किया था । उनके नाजुक, सुन्दर छोटे-छोटे दाँत और कोमल जबड़े भीतर-ही-भीतर शीघ्रता से हो रहे किन्हीं विचित्र परिवर्त्तनों के अद्‌भुत प्रमाण हैं । उनकी चारों ओर की परिस्थिति में ऐसी कोई भी बात नहीं है जो उनके बारे में थोड़ा-सा भी स्पष्टीकरण दे सके । असंदिग्ध रूप से वे भावी युग की सन्तान थे जो किसी गलती की वजह से बर्छी-भालों और रेत के खूँख्वार देश में पैदा हो गये थे ।

जिस तरह से हमारी सोचने की प्रवृत्ति है उस तरह से अफ्रीका, काले मनुष्यों का देश नहीं है । दूसरे विशाल भूखण्डों की तरह यहाँ भी जनन की दृष्टि से नितान्त भिन्न और जातिगत शाखाओं-प्रशाखाओं का अद्‌भुत मिश्रण हुआ है । और अब यह पता लगाना भी कठिन है कि इनमें किसका रक्त प्रवाहित होता है । हम केवल यह जानते हैं कि जिन पहले वास्तविक मानवों ने टेबल-बे खाड़ी के समुद्री-पक्षियों में खलबली मचाई थी, वे ऐसे लोग थे जिन्हें हमने कभी-कभी थोड़े समय के लिए मिश्रित सन्तान के रूप में प्रकट होने के अतिरिक्त उन्हें फिर कभी नहीं देखा । वे किसी-न-किसी अस्पष्ट रूप से आधुनिक कालाहारी बुशमैन जाति के लोगों से सम्बन्धित हैं । लेकिन कालाहारी बुशमैन, शरीर और मस्तिष्क, दोनों से बौना है और तेजी से लुप्त होता जा रहा है । इसके विपरीत बुशमैन के पुरखे, शायद वीना (Weena) के साथ 'समय-यन्त्र' के भावी युगों से बाहर निकल कर आये थे ।

दक्षिण-अफ्रीकी तट के किनारे-किनारे, प्राचीन चट्टानों के नीचे, सबसे नीचे की परत में, साथ ही जमीन के अन्दर की ओर हिमयुग के मलबे और आदियुगीन एकत्रित मिट्टी में, दूर-दूर तक इन निराले मानवों की हड्डियाँ बिखरी पड़ी हैं । समय की दृष्टि से वे हम से इतनी दूर हैं कि उनकी गुफाओं और तटवर्ती निवास-स्थानों में प्रवेश करने वाले पहले पुरातत्त्वविद् को यह उम्मीद थी कि उसे किसी आदिकालीन-मानव के पुरखों की, जैसे कि नियन्डर-थलीय मानव की, हड्डियाँ प्राप्त होंगी । पर इसके बदले फावड़ों ने मानवता की ऐसी शाखा के ऊपर से आवरण हटाया जिसके बारे में महान् अंग्रेज शरीर वैज्ञानिक सर आर्थर कीथ ने कहा है कि यह एक ऐसे मनुष्य के अस्थि-अवशेष हैं "जिसके मस्तिष्क का आकार-प्रकार यूरोप की किसी की नई-पुरानी जाति के लोगों से बड़ा है ।"

लेकिन बात यहीं पर खत्म नहीं होती । केपटाउन विश्वविद्यालय के डाक्टर

ड्रेनान (Drennan) ने शरीर-रचना-विज्ञान की दृष्टि से आश्चर्यजनक इस प्रकार के नमूने पर टिप्पणी करते हुए लिखा है, "अपनी अनेक विशिष्टताओं के कारण यह खोपड़ी अति आधुनिक मालूम होती है और लगभग सभी दृष्टियों से यूरोपीय मानव से आगे है। कहने का तात्पर्य है कि यह किसी भी आधुनिक खोपड़ी की अपेक्षा पूँछहीन वानर जाति से कम मिलती है।" डाक्टर ड्रेनान इस खोपड़ी की अति-आधुनिकता का, यानी आधुनिक से भी आगे होने की विशिष्टता का, कारण उस भ्रूणीकरण को मानते हैं जिसकी कि मैं चर्चा कर चुका हूँ।

इस खोपड़ी में, बड़े मस्तिष्क की अपेक्षा अधिक मुग्ध करने वाली वस्तु मस्तिष्क-कोष्ठ (Cranium) का उसके आधार से तथा चेहरे से सम्बन्ध है। खोपड़ी का आधार यानी नाक की जड़ से लेकर रीढ़ शुरू होने तक का भाग ऐसी विशेष तरह से बँधा और छोटा बना हुआ है जैसे कि वयस्क चेहरे के निर्माण में सहायता देने वाले आधार के फैलाव से पहले की बच्चे की खोपड़ी में होता है। इस प्रकार इस स्थायी छोटे मस्तिष्क-कोष्ठ आधार के ऊपर विशाल मस्तिष्क फैलता है और इस फैलाव से मनुष्य का माथा, आँखों के ऊपर, आगे की ओर निकल आता है और भौंहों के नीचे उसका चेहरा पीछे की ओर सफाई से संकुचित-सा रहता है। इस खोपड़ी में वास्तविक नीग्रो जाति के उभरे चेहरे जैसी कोई चीज नहीं है। जैसा कि डाक्टर ड्रेनान का कहना है यह खोपड़ी काकेशियाई मानव जाति की तुलना में भी अति आधुनिक है। लगता है कि खोपड़ी का तला धीरे-धीरे बच्चों में होने वाली वृद्धि की तरह बढ़ता रहा, जबकि उसी बीच वृद्धि की गति निर्धारित करने वाला मस्तिष्क पूर्ण परिपक्वता प्राप्त होने तक लम्बा-चौड़ा होता गया।

इस खोपड़ी के उभार का अध्ययन करने और इसके विभिन्न अनुपातों की गणना आदि करने के बाद ज्ञात होता है कि इन दक्षिण अफ्रीकी फॉसिलों में, मस्तिष्क-कोष्ठ और चेहरे के बीच पाँच और एक का विस्मयजनक अनुपात है। इन फॉसिलों को आम तौर पर, इनके पाये जाने वाले स्थान के नाम पर 'बौस्काप' या 'बौस्कोपोइड' (Boskop or Boskopoid) कहा जाता है। इनकी तुलना में यूरोपीयों की खोपड़ी का यही अनुपात लगभग तीन-एक का है। बौस्काप-मानव की खोपड़ी से सम्बन्धित ये आँकड़े इस बात के महत्त्वपूर्ण संकेत हैं कि उसके चेहरे का परिमाण किस हद तक "आधुनिक बनाया गया था" और किस हद तक मस्तिष्क-वृद्धि से हीन स्थिति में था। यह सच है कि डाक्टर रोनाल्ड सिंगर ने हाल में ही यह तर्क प्रस्तुत किया है कि बौस्काप लोगों को बुशमैन कबीले के लोगों से भिन्न नहीं किया जा सकता है—क्योंकि बाद के

इस बुशमैन मानव-दल में बौस्काप मानवों के रूप-गुण देखे जा सकते हैं। लेकिन वे भी, उनके उस विचित्र परिवर्तित शिशु के से मानवोत्तर रूप-आकार आदि से इन्कार नहीं कर पाये जिन पर कि हम विचार करते आ रहे हैं। अधिक-से-अधिक कीथ और ड्रेनान की बातों के विपरीत वे यह कह सकते हैं कि इस प्रकार की विशेषताएँ दक्षिण-अफ्रीकी जातियों के सारे इतिहास में अनेक स्थलों पर एक बिखरे हुए ढंग से प्रकट हुई हैं। तुलना की दृष्टि से वर्तमान काकेशियाइयों के चेहरों की बनावट, हमारी दृष्टि से विकसित होते हुए भी, इन बौस्काप लोगों की तुलना में केवल सामान्य श्रेणी की ही है।

भावी मानव के दाँतों के बारे में जो कल्पना की जाती है, उससे इनके दाँत थोड़े भिन्न हैं, पर इसके बावजूद वे भी आधुनिक हैं। हमारी भविष्यवाणियों में प्राय: यह कल्पना भी रहती है कि समय पाकर हमारी तीसरी दाढ़ नहीं रहेगी। सचमुच ही ऐसी सम्भावना है, क्योंकि कभी-कभी यह दाढ़ बाहर निकलने में असफल हो जाती है, कभी इसके लिए जगह ही नहीं रहती और यह तकलीफ देने लगती है। बौस्काप लोगों को इस प्रकार का कोई कष्ट नहीं था। उनके दाँत, कोमल जबड़े के अनुपात में सुन्दर ढंग के और छोटे हैं, उनमें दाँतों के ऐसे किसी रोग के चिह्न नहीं हैं जिनसे हम पीड़ित रहते हैं। दक्षिण अफ्रीका के इस भाग में, एक शिकारी की इस दुनिया में, कम-से-कम, आधुनिक कांगोई-नीग्रो की-सी सुदृढ़ दन्तावली की आवश्यकता थी, लेकिन प्रकृति ने यहाँ दूसरी ही व्यवस्था की। इन लोगों के दाँत ऐसे थे जिनकी मदद से वे अमरीका के सर्वोत्तम रेस्तराँ में बैठ कर शान्तिपूर्वक धीरे-धीरे खाना चबा सकते थे और ग्राहक उन्हें देखकर चौंकते भी नहीं।

लेकिन इस चेहरे के साथ स्थिति कुछ और ही होती। इसकी अलग-अलग भागों की बनावट में ऐसी विशेषताएँ हैं, जिनसे बौस्काप-मानवों का, आधुनिक बौने बुशमैन और कुछ ऐसी प्राचीन नीग्रो जाति के साथ सम्बन्ध प्रकट होता है जो पश्चिमी तट के काले लोगों से भिन्न हैं। हम इस बात पर विश्वास करते हैं कि उनके बाल, बुशमैनों के से मजबूती से गुँथे हुए मिर्ची-फल जैसे, और शरीर का रंग उन्हीं की तरह पीला-पीला भूरा था। इस तरह नीग्रो जाति की एक शाखा से एक ऐसा मनुष्य पैदा हुआ, जो वस्तुत:—जहाँ तक हम शरीर-रचना विज्ञान की दृष्टि से जाँच सकते हैं—ऐसी मानवोत्तर किस्मों में सबसे अधिक विकसित था जो कभी इस पृथ्वी पर जीवित रह चुकी हैं। यदि इस प्रकार की विशेषताएँ गोरी जाति के लोगों में प्रकट होतीं तो उन्हें निस्सन्देह अन्य 'निम्न' जातियों के साथ तुलना करते समय द्वेषपूर्ण ढंग से प्रयुक्त किया जाता।

हम, अवश्य ही, उस अन्तिम प्रश्न को दुहरा सकते हैं जिसका उत्तर नहीं दिया जा सकता। बौस्काप लोगों के लिए इस विशाल मस्तिष्क का क्या अर्थ था ? हम उनकी विचित्र और अजनबी शरीर-रचना पर विस्मय कर सकते हैं। हम मानव-शरीर के अन्दर छुपी उन रहस्यमय शक्तियों पर आश्चर्य कर सकते हैं जिनमें इतनी सामर्थ्य है कि एक बार मुक्त होने पर उन्होंने इस 'आधुनिक' से भी अधिक प्रगतिशील जीव को, स्वयं हिमयुग की देलहीज़ पर जीवित ला खड़ा किया।

हम कई दिनों तक इस बात पर बहस कर सकते हैं कि इस तरह के मस्तिष्क-कोष्ठ का अद्भुत वरदान क्या वस्तुतः ही एक अधिक श्रेष्ठ मस्तिष्क था ? हम उस मानव के दयनीय हड्डियों के ढेर पर तरस खाते हुए मुस्करा सकते हैं, उन मूक पत्थरों की ओर संकेत कर सकते हैंजो उसके मात्र-उपकरण थे। हम ऐसा कर तो सकते हैं लेकिन ऐसा करते समय हम ऐसे ही दिनों और समय के अपने ही आदिम पूर्व-पुरखोंकी खिल्ली उड़ा रहे होंगे। हम उस ऊँची कलात्मक अनुभूति को भूल रहे हैं जो यूरोप में हिमयुग के अन्तिम दिनों फूली-फली थी। यह अजीब बात है कि वैसी ही कला यहाँ भी पल्लवित हुई थी और जो अभी भी कालाहारी के बौने बुशमैनों तक में, बहुत कुछ शेष है। नहीं, हम इस प्रकार के आधारों पर बौस्काप लोगों के महत्त्व को भुठला नहीं सकते, क्योंकि अद्भुत सामर्थ्यपूर्ण वरदानों के होते हुए भी उच्च कोटि की सभ्यता एक रात में निर्मित नहीं होती।

जो कुछ हम कह सकते हैं, वह यह है कि शायद विकास-क्रम की अनियंत्रित यान्त्रिक व्यवस्था इतनी तेज हो गई थी कि ये लोग अपने से ज्यादा खूँख्वार और अपने से कम परिवर्तित शिशु के गुणों वाले लोगों से प्रतियोगिता करने के लिए शारीरिक रूप से तैयार नहीं रहे होंगे। एक विशेष अर्थ में, जीवन सम्बन्धी काल-यन्त्र ने, इन लोगों को इनके अपने समय और स्थान से बाहर, अलग धकेल दिया—एक ऐसे समय से जो कि दस हजार वर्ष बाद भी लौटकर नहीं आया है। हम अनुमान कर सकते हैं कि उनमें अपने प्रतियोगियों की मूल क्रूरता जैसे गुण की, मानसिक रूप से भी बहुत-कुछ कमी थी।

यदि कुछ अन्य वैज्ञानिकों के साथ हम यह मान लें कि बाद के बुशमैन जाति के लोग उनके वंशज हैं तो यह कहा जा सकता है कि विकास-क्रम की सरपट दौड़ से वह जीव केवल मात्र बौने और लुप्त होते लोगों तक ही पहुँच सका। इस प्रकार यह पूर्ण भ्रूणीकरण का युक्तिसंगत परिणाम था, यह अपने से अधिक प्रसवशील और खूँख्वार जातियों की धकापेल के बीच घोर दुस्साहसिक संघर्ष था। उस एक महान् प्रश्न का उत्तर अभी भी कहीं नहीं है, अभी

भी कुछ नहीं है । लेकिन उस अँधेरी प्रयोगशाला में, जब सब विद्यार्थी चले जाते हैं तब मैं, एक बार फिर पर्दे पर अपने मित्र की शानदार तस्वीर पर नजर डालता हूँ, एक-एक कर मैं उसमें भ्रूणीकरण से प्राप्त परिष्कारों की उन विशेषताओं पर दृष्टि डालता हूँ, जिनके द्वारा कलाकार ने भावी विकास की कल्पित प्रवृत्तियों को दर्शाने का प्रयत्न किया है—यानी उसका विशाल मस्तिष्क और कोमल चेहरा ।

मैं उसे देखता हूँ, और जानता हूँ कि मैंने यह सब पहले देखा है, जीवित शरीरों के भीतर झाँक कर हड्डियों का अध्ययन करता हूँ, जैसी कि अब मेरी आदत पड़ चुकी है । मैंने इस चेहरे को एक और जाति के रूप में, किसी और ही भूले-विसरे दिन देखा है । मैं विभिन्न रूपों के उस शाश्वत कम्पन के प्रति एक बार फिर सचेत हो गया, जिसे अब हम प्रगति के नाम से पुकारने की बुद्धिमत्ता करने लगे हैं, लेकिन जिसका अर्थ हमेशा ही हमारी समझ से परे रहता है ।

भावी मानव इसी पृथ्वी पर आया और उसने सभ्य-सँवरी दृष्टि से तो नहीं पर उदास-उत्सुक निगाहों से हमारे बीच निहारा । एक दूर-दराज देश के कंकर-पत्थरों के ढेर में वह अपनी हड्डियाँ छोड़ कर चला गया । यदि हम विकास-क्रम को सही समझते हैं तो वह अगले दस लाख वर्षों बाद, फिर आ सकता है । क्या विकासशील शक्तियाँ अपनी अवतारणा के लिए उचित समय की खोज कर रही हैं ? या उसका स्वयं आना, यहाँ तक कि उसके प्रकट होने का क्षण भी, हमेशा ही नाटक का परदा गिरने और एक जाति के नष्ट होने की पूर्व सूचना देता है ?

जो विचित्र आन्तरिक कालयन्त्र आस-पास के वातावरण के प्रति इतनी उपेक्षा प्रकट करता दिखाई देता है, हो सकता है उसने शायद मनुष्यों के जीवन-काल की कोई सीमा निर्धारित कर रखी हो । यही वह वास्तविक प्रश्न है जो मेरे मित्र की तस्वीर के सुन्दर चेहरे ने पेश किया है । मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि बौस्काप मानवों ने इसी प्रश्न का उत्तर दिया है । मैं चाहता हूँ कि इस सम्बन्ध में मैं निश्चित हो जाता, मैं सोचता हूँ, काश, मैं जानता होता ।

ये खोपड़ियाँ या आधुनिक मानवों में कभी-कभी दिखने वाली अलग प्रकार की खोपड़ियाँ और चाहे जो कुछ भी बतलाती हों, उनसे एक बात स्पष्ट रूप से प्रकट होती है, जो लोग कहते हैं कि वर्त्तमान मानव मस्तिष्क-कोष्ठ और वस्तिप्रदेश या कूल्हे की सीमाओं के कारण, मानव-मस्तिष्क अब आगे और बड़ा नहीं हो सकता, वे गलती पर हैं । वर्त्तमान औसत से लगभग एक-तिहाई अधिक क्षमता की खोपड़ियाँ बौस्काप मानवों में, और यहाँ तक कि आधुनिक

मानव जातियों के कुछ दुष्प्राप्य व्यक्तियों में पाई गई हैं। इसका रहस्य जन्म से पहले के मस्तिष्क के परिमाण में नहीं है, बल्कि जैसा हम पहले देख चुके हैं, उस आकस्मिक स्फुरण में है जो जन्म के पहले वर्ष में मनुष्य को ऊपर उठा कर बाहर एक ऐसे सामाजिक जगत् में ले जाता है जिस जगत् से उसके अन्य साथी प्राणी अलग-अलग पड़ जाते हैं। जन्मोपरान्त होने वाला यह विस्तार, आगे आने वाले लम्बे युगों में और बढ़ेगा या नहीं, यह बताया नहीं जा सकता; और न शायद इसका कोई विशेष महत्त्व ही है। क्योंकि सामाजिक मस्तिष्क की रचना में, प्रकृति, मनुष्य द्वारा उस जाल से बच निकली है जिसमें इस ग्रह के अन्य सभी जीवन-रूप किसी-न-किसी तरह फँसे हुए हैं। उसने मस्तिष्क की उन युक्तिसंगत सीमाओं के अन्दर, जो कि इस समय भी विद्यमान हैं, सभ्य स्मृति का अनवरत प्रवाह इस प्रकार कायम रखा हुआ है मानो वह विश्व के विशाल पुस्तकालयों में बंद रखा हुआ है। वस्तुतः और अधिक मस्तिष्कों की आवश्यकता नहीं है, अब आवश्यकता इस बात की है कि जिन लोगों ने हमारे लिए बर्फ, बाघ और भालुओं से संघर्ष करके विजय प्राप्त की, उनकी अपेक्षा अधिक भद्र, शिष्ट और सहिष्णु लोग हों। जिस हाथ ने कभी कुल्हाड़े का प्रयोग किया था, अब वह अतीत की किसी पुरातन अन्धभक्ति के कारण उतने ही प्यार से मशीनगन को सहलाता है। यह आदत ही है जिसे मनुष्य को जीवित रहने के लिए छोड़ना होगा, परन्तु जड़ें बहुत गहरी हैं।

बहुत पहले की बात है कि, मैं, एक बार कैदी की हैसियत से बैठे-बैठे, एक किसान सैनिक को देख रहा था जिसे हाल में ही एक छोटी मशीनगन से सुसज्जित किया गया था। मैंने देखा कि उसने मशीनगन धीरे से घुमा कर मेरी ओर तान दी। यह एक खूबसूरत हथियार था और उसकी उँगलियाँ हिचकिचाती हुई उस हथियार के घोड़े से खेल रही थीं। एकाएक इतनी बड़ी शक्ति का हाथ में आ जाना और फिर उसके प्रयोग की मनाही सम्भवतः उस व्यक्ति की सहनशक्ति के बाहर हो रही होगी। मुझे यह भी याद है कि मैंने, पास ही विरोध में आती एक नारी की आवाज़ सुनी थी—हमेशा से सभ्य बनाने वाली स्त्रियों की आवाज़, जो यह जानती हैं कि पुरुष बेवकूफ, बच्चों-जैसे और ग़ैरजिम्मेदार होते हैं। उस सिपाही ने झेंप कर, धीरे-से मशीनगन मेरी छाती की सीध से परे हटा ली। मशीनगन की नाल के ऊपर से मेरी ओर झाँकती उसकी आँखों में कुछ तो शरारत भरी थी और कुछ उनसे समझौता कर लेने की इच्छा टपक रही थी।

"थौम्पसन, टौम सन", उसने कहा और फिर मशीनगन की नाली पर थपकी देते हुए दुहराया, "टौम-सन"। मैंने राहत की लम्बी साँस लेते हुए सिर

हिलाकर, कमजोर-सी हामी भरी। आखिरकार हम दोनों ही पुरुष थे और नाश के इस बड़े विषय को समझते थे। और साथ ही, क्या, मैं, उस देश का नागरिक नहीं था जहाँ इस हथियार की अद्‌भुत यन्त्र-रचना हुई? इसलिए मैंने सिर हिला कर फिर हामी भरी और सावधानी से उसके बाद कहा, "थौम्पसन, टौम-सन...(Bueuo, si, muy bueuo), फिर हमने एक दूसरे की ओर पौरुषेय मुस्कान से मुस्कराते देखा, ऐसी मुस्कान जो सुदूर अतीत की ओर, हिमयुग तक फैली थी। तब से आज तक विद्या-मन्दिरों (Academic halls) में मानवता के भविष्य पर विचार करते समय उस सैनिक की मुस्कराहट, मैं कभी भी पूरी तरह से भुला नहीं सका हूँ। जब कभी मेरी मेज पर, उन नाजुक भूली-बिसरी खोपड़ियों में से कोई एक लाकर रखी जाती है तो मैं मन-ही-मन भविष्य को सामने रख कर, उस मुस्कराहट को तोलता हूँ।

२. लघु मानव और उड़न-तश्तरियाँ

आधुनिक युग के आकाश में जितने खतरे हैं, उतने पहले कभी नहीं थे। पिछली शताब्दी में, रात के समय, जगह-जगह जाकर सड़कों की बत्ती जलाने वाला, जिन चीजों को उपेक्षा से देखकर चला जाता था, अब वही चीजें, मनुष्य की उस पीढ़ी को परेशानी में डाले हुए हैं जो हवाई हमले की सूचना देने वाले भोंपू के चीत्कारों और इन अशुभ आशंकाओं के बीच पले हैं कि न मालूम किस क्षण उनके मकानों की छतें भहरा कर टूट पड़ें। यहाँ तक कि दिन में भी, हवा में तिरते हुए डैंडेलियन (एक प्रकार का जंगली पौधा) के बीजों से टकरा कर आती हुई रोशनी या तेज़ चमकती धूप में, जाले के पतले तारों पर चढ़ती हुई मकड़ी को देखकर कोई भी ऐसा नौसिखिया, जो आकाश की वस्तुओं की दूरी और प्रकृति का अनुमान लगा सकने का अभ्यस्त नहीं है, उत्तेजित हो कई सवालों की झड़ी लगा सकता है।

चूँकि आजकल हम, अन्तरिक्ष में उड़ने वाले राकेटों की बातें करते हैं, उसके बारे में लेख लिखते हैं और तरह-तरह की कल्पनाएँ करते हैं इसलिए इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है कि इन विचारों से पर्दे का दूसरा रूप भी सामने आ जाय कि राकेट या उसी किस्म की कोई और वस्तु हमारी पृथ्वी में, सम्भवतः कहीं 'बाहर' से आई हो। मैं भी यह स्वीकार करता हूँ कि अपनी युवावस्था में मैंने इस प्रकार की घटना घटित होने की बड़ी आशा से प्रतीक्षा की थी। पृथ्वी से बाहर, अन्धकार से परे जीवन के पाये जाने का विश्वास इतना गहरा है कि लोग यह सोचते हैं कि यदि इस प्रकार के प्राणी हमसे अधिक प्रगतिशील हैं तो

वे अन्तरिक्ष की दूरी तय कर किसी भी क्षण यहाँ आ सकते हैं और शायद हमारी वर्त्तमान पीढ़ी के जीवन-काल में ही आ जायँ। समय की अनन्तता को ध्यान में रखते हुए कोई बाद में यह भी सोच सकता है कि संभव है बहुत पहले संयोगवश उन लोगों का कोई सन्देश यहाँ आया हो, भभकते हुए कोयलों के जंगलों की दलदली कीच से टकरा कर रह गया हो, कोई चमचमाता प्रक्षेप-यन्त्र (Projectile) फुफकारते सरीसृपों के ऊपर मँडराया हो और उसके सूक्ष्म उपकरण कोई सूचना उपलब्ध न होने के कारण विचार-शून्य होकर बन्द हो गये हों।

अपनी युवावस्था में, पश्चिमी बैडलैंड्स में फॉसिलों की खोज करते समय मैं कभी-कभी सोचा करता था कि उसे अभी भी कहीं खोजा जा सकता है। तृतीय युग (Tertiary) की उस मिट्टी में दबा, उसी में विलीन होता वह कब का मृत पड़ा होगा, उसी मिट्टी में जो कभी टिटानोथेरस के भारी कदमों के नीचे हरी रही होगी। निस्सन्देह, समय के अनन्त विस्तार, मन्द पड़ते सूर्यों, और क्षीण होती व्यवस्थाओं में से यदि मार्ग निकालना सम्भव होता तो वह निकाल लिया गया होता। परन्तु वह चमचमाता प्रक्षेप-यन्त्र नहीं खोजा जा सका और अब, गम्भीरता प्रदान करने वाली प्रौढ़ अवस्था में, मैं इस तरह की खोज करना कब का छोड़ चुका हूँ। इसके अलावा 'विस्तृत होते ब्रह्मांड' के वर्त्तमान सिद्धान्त के कारण, समय को जिस रूप में हम जानते हैं, उस रूप में वह अनन्त नहीं रहा। यदि सारा ब्रह्मांड कुछ खरब वर्ष पहले किसी एक ही विस्फोटक क्षण में उत्पन्न हो गया था तो सभी वस्तुओं के सम्पन्न होने के लिए काफी समय नहीं रहा था, यहाँ तक कि हमारी आकाशगंगा से परे, दूर-दूर बिखरे तारों के पीछे भी सब-कुछ हो सकने के लिए काफी समय नहीं रहा होगा। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, अब यह सोचा जा सकता है कि इस अनन्त आकाश में हमसे श्रेष्ठ कोई और मस्तिष्क नहीं है।

यदि हमसे अधिक श्रेष्ठ मस्तिष्क का अस्तित्व हो तो उसके, एक लघु मानव के शरीर में न हो सकने के कई कारण हैं। मनुष्य का लघु के प्रति प्रबल आकर्षण होता है और लोक-कथाएँ गढ़ने वाले के हाथों, यदि एक लघु मानव भी पहुँच जाय तो वह कुछ दिनों में उसकी संख्या सैकड़ों में पहुँचा सकता है। लघुता के प्रति अव्याख्येय हमारा भावावेग, अन्तरिक्ष की सीमा में प्रवेश कर जाने पर भी कम नहीं हुआ है, और जैसा कि हम आगे देखेंगे, हमारी यह प्यास परमाणु के घूमते चक्रों से भी नहीं बुझ सकी है। उड़न-तश्तरियाँ और आकाश से आये हुए बहुप्रचारित लघु मानव, हमारे अपने ही आकांक्षित स्वप्नों के दूसरे रूप हैं।

जब मैंने पहले-पहल लघु मानव के बारे में सुना था, उस समय, उड़न-तश्तरियों की कोई चर्चा नहीं होती थी, और न उस लघु मानव के मालिक ने उसकी पार्थिव पैदाइश के अलावा किसी और वस्तु का ही हवाला दिया था। जब पश्चिम में हड्डियों की खोज करने वालों के एक कैम्प में मेरा पहले-पहल लघु मानव से सामना हुआ था, तब से अब तक लगभग एक-चौथाई शताब्दी बीत चुकी है। उसे हमारे पास एक बक्से में एक पशुपालक लाया था। "मैंने सोचा कि आप शायद उसके बारे में जानते होंगे", उसने कहा, "मगर आपको इसके लिए पैसे खर्च करने पड़ेंगे, इस नन्हे-आदमी से, धन कमाया जा सकता है।"

"आदमी ?" हम लोगों ने पूछा।

"हाँ आदमी" उसने जवाब दिया, "उसे आप छोटी जाति का आदमी (Pygmy) या बौना कह सकते हैं, पर आज तक जितने भी प्रदर्शित किये जाने वाले बौने देखे हैं, यह उन सबसे छोटा है। साथ ही एक ममी (मसाला लगाकर रखा हुआ सुरक्षित शव) भी है, एक छोटी मुर्दा ममी। जहाँ पर मुझे यह मिली, वहाँ इसे किसी ने रख छोड़ा था। हो सकता है कि यह वहाँ हज़ार साल पहले रखी गई हो, आप शायद जानना चाहेंगे।"

हम सब उस बक्से के ऊपर झुक गये। उससे लिपटा हुआ आखिरी कागज हटाया गया। और उसने जीव को उठाकर अपनी हथेली पर रखा। तब से अब तक मैंने बहुत-सी अजीब चीजें देखी हैं और बीसियों तरह की बनावटी चीजें भी देखी हैं, लेकिन उस छोटे आदमी को देखकर मेरे तन-बदन में फुरहरी-सी दौड़ गई थी। खड़ी अवस्था में उस आदमी की लम्बाई दो फुट से अधिक नहीं रही होगी। उसके शव को पालथी मारे झुकी हुई अवस्था में सुरक्षित रखा गया था, बाजू मुड़े हुए थे। उसकी आँखें बन्द थीं, चेहरे से अस्पष्ट रूप से कुटिलता झलकती थी। मुझे लगा कि मैं स्वप्न देख रहा हूँ, यहाँ तक कि मैं इस बात की कसम खा सकता था।

मैंने उसे छुआ। उस वक्त भी उसमें एक अजीब मांसलता शेष थी। वह एक सूखी ममी नहीं थी। जैसे गुफाओं के अन्दर पड़े हुए शव, प्राकृतिक अवस्था में सुरक्षित ममी बन सकते हैं यह उसी प्रकार की ममी से ज्यादा मिलता था। उसकी दुम नहीं थी यह मैं जानता हूँ क्योंकि मैंने अपनी आँखों से देखा था। तब से आज इस दिन तक, वह लघु मानव मेरे दिमाग में घर कर गया है। मैं आज भी उसके मुँह की वह अर्ध-अस्वाभाविक मुस्कान और उसके घुटनों पर रखे हुए छोटे-छोटे काले हाथ, ऐसे देख सकता हूँ मानो मैंने उसे कल ही देखा हो।

"आप इसे दो सौ डालर में ले सकते हैं" उस आदमी ने कहा। हमने एक-दूसरे की ओर देखा, लम्बी साँस भरी और अपने सिर हिलाये "हम इसके खरीदार नहीं हैं" हमने कहा, "हम खरीदारी नहीं, हड्डियाँ इकट्ठा कर रहे हैं और हम इन हड्डियों से सन्तुष्ट हैं।"

"बहुत अच्छा" उसने कहा। एक बार हमारी ओर सीधी निगाह डाली और बक्सा बन्द करते हुए कहा, "मैं आज रात वहाँ उधर कार्नीवल जा रहा हूँ। इस छोटे आदमी में रुपया है, रुपया।"

मैं समझता हूँ कि हमारे लिए भी यह ठीक हुआ कि हमने उसे नहीं खरीदा। मुझे न तो वह लघु-मानव पसन्द आया था, न उस कार्नीवल का वर्णन, जहाँ वह नन्हा आदमी और उसका मालिक जा रहे थे। मैं सोचा करता था, हो सकता है कि मरने के पहले देहात के किसी एक रास्ते पर किसी रंग-बिरंगे तम्बू में मेरा उससे एक बार फिर सामना होगा। उसके कई वर्ष बाद एक बार मैंने एक ऐसी वस्तु का वर्णन सुना जो दूसरे ही रूप में उस लघु मानव-सी जान पड़ती थी। इसका सम्बन्ध पुरा जीव-युग (Paleozoic) के ऐसे किसी जन्तु की काल्पनिक कथा से है जो फर्न वृक्षों में उस युग में शिकार करता घूमता था जबकि इस पृथ्वी पर टरटराते हुए जल-थल चारी (Amphibians) जीवों का राज था। इस किस्से का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, उस समय तक मैं जान चुका था कि वह था क्या। वह एक अविकसित-मस्तिष्क के मुर्दा पैदा हुए बच्चे का, मसालों से सुरक्षित किया अस्वाभाविक शव था।

मैंने यह आशा कभी नहीं की थी कि मैं उसे फिर उड़न-तश्तरियों की किताबों में प्रकट होता हुआ देखूँगा या देखूँगा कि 'लघुमानवों' की संख्या बढ़ती जायेगी और वे इतने आम हो जायेंगे कि अखबारों में लेख लिखने वाले भी उन पर ध्यान देने लगेंगे। यद्यपि मुझे कहीं अधिक जानकारी होनी चाहिए थी फिर भी मुझे यह आशा नहीं थी कि मुझे अपने जीवनकाल में ही यह सुनने को मिलेगा कि मेरा वह लघु मानव हमारे ग्रहमंडल से बाहर का जीव है। यह सच है कि उसके पीछे एक कहानी है, लेकिन वह कहानी इसी पृथ्वी की है और सभी असम्भाव्य बातों की भाँति उसका सम्बन्ध उस महान् वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन से है, लेकिन यह सम्बन्ध एक अजीब, लम्बे और टेढे-मेढ़े रास्ते से होकर है।

मनुष्य उसी हद तक मनुष्य होते हैं जब तक उनमें तथ्यों को अस्वीकार करने की प्रवृत्ति पैदा नहीं होती। उनके समस्त अनुभव बताते हैं कि उनके बच्चे उनसे ठीक-ठीक मिलते-जुलते होंगे, बिल्लियों के बच्चे बड़े होकर बिल्लियाँ ही बनेंगे और बिल्लियाँ आगे चल कर बिल्लियों के बच्चे ही जनेंगी,

और यहाँ तक कि कुछ विचित्र-सी जीवन-रूपरेखा होने पर भी कीटडिम्ब से तितली ही बनेगी और तितलियाँ कीट-डिम्बों को जन्म देंगी। ये सब घटनाएँ ऐसी रोजमर्रा की बातें हैं कि हम कभी भी यह पूछने के लिए नहीं रुकते कि ऐसा होता क्यों है, या इस बात पर विचार नहीं करते कि इस आश्चर्यजनक नियमितता के परिणामों से यह अर्थ निकलता है कि जिस दुनिया को हम प्रायः अकस्मात् होने वाली घटनाओं से भरा और अर्थहीन समझते हैं उसमें अद्‌भुत ढंग का व्यवस्थित जीवन है।

यूनानी सभ्यता के समय से कुछ ज्ञानी लोग इसे विस्मयजनक विषय मानते रहे हैं, लेकिन ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम रही है। ज्यादातर लोग अपने कंधे उचकाते और उपेक्षा के साथ देवताओं की बातें करते या फिर अपने-आपको इस बात से सन्तुष्ट कर लेते, जैसा कि ईसाई जगत् बहुत समय तक करता रहा, कि प्रत्येक प्रजाति (Species) की विशेष रूप से सृष्टि की गयी है। इतना सब होने पर भी ज्ञानी जनों ने इस विषय पर खोज करना जारी रखा।

जब उन्होंने संसार के प्राणियों के एक व्यवस्थित वर्गीकरण के आरम्भिक प्रयत्न शुरू किये तो उन्हें पता चला कि किसी दैवी शक्ति के अलौकिक हस्त-क्षेप से प्रत्येक जीवित प्राणी की अलग-अलग सृष्टि की बात मान लेने पर भी अनेक प्रकार के जीवन-रूपों की बनावट में एक आधारभूत समानता विद्यमान है। जीवों की अलग-अलग सृष्टि का मत मानने वाले उस युग में, यह एक महत्त्व-पूर्ण खोज थी। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि बहुत बड़ी मात्रा में किसी नवीनता का अनायास घटित हो सकना संभव हो सकता था। वस्तुतः स्वयं मनुष्य बहुत सहज भाव से इस बात पर विश्वास करता था कि वह स्वयं भी इसी प्रकार की सृष्टि का अंग है। वे समुद्र-कन्याएँ, सिंह के शरीर और उकाब की चोंच वाले ग्रिफिन, अर्धमानव और आधे घोड़े जैसे सेन्टार और उन मनुष्यों की चर्चा ही क्या की जाय जिनके कान इतने बड़े होते थे कि वे खुद उनके अन्दर घुस कर सो लेते थे, प्राचीन जीव-जगत् के ये सभी काल्पनिक प्राणी इसी अनियंत्रित, रचनात्मक-सनक के ही स्वाभाविक और अनायास परिणाम रहे होंगे।

परन्तु जीवों के बीच समानता का नमूना भी विद्यमान था: वन-मानुष और मनुष्य की हड्डी-हड्डी एक-जैसी थी। केवल यही तथ्य, कि 'सरीसृप' शब्द के बहुवचन से दैत्याकार सरटों से लेकर एक-छोटे से सर्प तक किसी भी जानवर का संकेत दिया जा सकता है, इसी बात को दर्शाता है कि इन सबमें एक समान प्रतिमान (Pattern) विद्यमान है। सभी पक्षियों के पर, पंख और पंजे होते हैं, अपनी विभिन्नताओं के होते हुए भी वे सभी एक समान श्रेणी में

हैं। उनके अनेकों रूप बन गए हैं फिर भी उनमें सदा-सर्वदा एक प्रकार का पक्षीपन बना रहता है। सभी पक्षियों की रचना एक समान योजना के अधीन ठीक वैसी ही हुई है जैसे मुझमें और उस एक चूहे में स्तनपायी जीवों की एक-सी विशेषताओं की रचना हुई है जो मेरी डैस्क की दराज में रहता है। एक अव्यवस्थित जगत् में इस सबका स्पष्टीकरण दे सकना मुश्किल है, जब हाल ही में मैंने इस चूहे को रद्दी की टोकरी में फँसा और घबराया हुआ पाया तो उसमें और अपने बीच की समानता को देख कर मैं कुछ इस प्रकार विवश हो गया कि केवल मात्र घबराहटवश मैं उसे छुड़ाने के लिए उपाय करने लगा।

जब तक ये अद्‌भुत प्रतिमान हमारे आस-पास के जीवों में पाये जाते रहे तब तक लोग कुछ विशेष चौकन्ने नहीं हुए। यहाँ तक १८१२ में जब कूवियर (Cuvier) ने अलग-अलग प्रकार के जीवों को चार मूल आरम्भिक श्रेणियों या 'आरचेटाइप्स' (Archetypes) के अन्तर्गत रखने का शानदार प्रयत्न किया तो भी किसी को कोई विशेष आपत्ति नहीं हुई। और धार्मिक दृष्टि से तो सबसे कम। महान् प्रकृतिविज्ञ लुई अगासिज़ के शब्दों में, "सृष्टि की यह योजना किन्हीं भौतिक नियमों के अवश्यंभावी कार्यों के परिणामस्वरूप नहीं बनी है, बल्कि यह सर्वशक्तिमान् आदि-मनीषा की स्वतंत्र सूझ है जो बाहरी दृश्य-रूपों में प्रगट होने के पूर्व उसके विचारों में परिपक्व हो चुकी थी।"

लेकिन इसमें बहुत समय नहीं लगा कि प्रतिमान—दैवी रूपरेखा, जिसे वर्त्तमान् जगत् में पहले-पहल मान्यता प्रदान की गयी—भूविज्ञान-विशारदों द्वारा काल की गहराइयों को लाँघ कर भी ढूंढ़ लिया गया। उस समय भूतकाल के जीव-जगत् की खोज हो रही थी। पता चला कि भूतकाल की दुनिया मानव-रहित थी। आश्चर्य की तो बात यह रही कि जल्दी ही यह भी मालूम हो गया कि उस काल के विनष्ट जीवों को वर्त्तमान युग के जीवों के बड़े-बड़े वर्गों में सम्मिलित किया जा सकता है। वे या तो स्तनपायी थे, या जलथलचारी या सरीसृप। हालाँकि किसी भी जीवित व्यक्ति ने उन्हें कभी नहीं देखा, फिर भी लगता था कि वे अतीत के विराट् काल-गर्त्त के पार, दैव की अलौकिकता और शाश्वत रूपों के अनवरत प्रवाह हैं।

दूसरा तथ्य, कि अतीत में मनुष्य की खोज नहीं हो सकी थी, लोगों की निराशा का कारण बन गया था। आज के मानव-केन्द्रीय ब्रह्मांड में, सरीसृपों के युग का पता चलने पर, वहाँ मनुष्य के न पाये जाने पर हम, रेवरेण्ड श्री किरबी के विक्षोभ को समझ सकते हैं, "कौन सोच सकता है कि जिसमें असीम शक्ति, विवेक और सद्‌भावना है वह केवल दैत्यों के रहने के लिए एक जगत् की सृष्टि करेगा, एक ऐसे जगत् की जिसमें एक भी ऐसा विवेकशील प्राणी नहीं जो

उसकी सेवा और यशोगान करे।" प्राचीन काल के जीवों में अपना आधिपत्य खोजने में असफल मानव के आहत अहं का यह विलाप है। इससे भी अधिक दुःखदायी तो यह है कि जो दुनिया उसके सुख-उपभोग के लिए बनाई हुई मानी जाती थी, वह अगणित कल्पों तक उसके आगमन के प्रति बिल्कुल बेखबर रही। अब, मानवीय मस्तिष्क के बन्द दरवाजे से समय और शून्य की चिलचिलाती शीतल वाष्पें छन-छन कर भीतर प्रवेश करने लगी हैं।

इन्हीं सँकरे रास्तों पर चल कर अत्यन्त भयावह भविष्यवाणियों की काली रात में मनुष्य ने भूविज्ञानीय सिद्धान्त को जन्म दिया। पचास वर्ष तक यह सिद्धान्त प्रचलित रहा और इसका प्रतिपादन करने वाले एक जोरदार आखिरी प्रयत्न करके विचक्षण रूपकों की सहायता से मानव-नाटक का क्षेत्र विस्तृत करके उसे अन्तरिक्ष के अनन्त विश्वासों से भी परे ले गये। उड़न-तश्तरियों के लघु मानव के रूप में उसकी गूँज अभी भी हमें सुनाई पड़ती है। विज्ञान की कड़ी निगाहों के सामने इससे अधिक साहस-भरी कोई पुराण-गाथा कभी नहीं कही गई।

मेरी पुस्तकों की अलमारी में ह्यू मिलर (Hugh Miller) की एक किताब है, जिसका नाम है "चट्टानों की साक्षी" (Testimony of the Rocks), इसके एक पैरे में लिखा है, "इससे भी अधिक ऊँचाई पर ट्रियास की एक जमा परत में हम एक निशान देख कर चौंक गये। यह एक अजीब भद्दे आकार का भारी मानवीय हाथ-सा दिखाई पड़ता है, परन्तु उसका अँगूठा, जैसे मनुष्य में होता है, उसके विपरीत उँगलियों के दूसरी ओर है।"

इस प्रकार के साहित्य को समझने का केवल एक ही उपाय है। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध के प्राणि-वैज्ञानिकों ने यह बात भली भाँति समझ ली थी कि जीवों के प्राकृतिक संगठन की समानता का सिलसिला अतीत के युगों तक चला गया है और इस प्रकार के जीवन-रूपों में देखा जा सकता है जिन्हें किसी जीवित व्यक्ति ने नहीं देखा है। उनका विश्वास था कि इन सम्बन्धों की कड़ी अपार्थिव और अलौकिक थी। उन्होंने जीव-रचना की योजना की समानता को एक भौतिक सम्बन्ध के रूप में देखने से इन्कार कर दिया था। इसके विपरीत उन्होंने भूतकाल का अध्ययन दैवी शक्तियों द्वारा परिवर्तनीय परन्तु संगत योजना से संचालित होने वाली सृष्टि और विनाश की क्रमिक श्रृङ्खला के रूप में किया। एक लेखक ने कहा है: "भूविज्ञान भविष्यवाणी करने वाले ऐसे लेखापट्ट को खोल कर रख देता है जिसमें अंकित आदिकालीन सजीव सृष्टि आगे आने वाली सृष्टि की ओर संकेत करती है।"

भूविज्ञान-धर्मशास्त्र के जन्म से पूर्व सन् १७२६ में ज्यूरिख के प्रोफेसर श्यूखज़र (Scheuchzer) ने बहुत पूर्व-विनष्ट जाति के एक जलथलचारी जीव की खोज की थी और उसके अस्थिपंजर को 'होमोडाइलूविग्राइ टेस्टिस' (Homo Diluvii testis) यानी 'प्रलय का साक्षी मानव' कहा था। बड़ी निष्ठा के साथ उसका 'आदियुगीन विश्व की लुप्त जाति का एक दुर्लभ अवशेष' नामकरण करने के बाद पता चला कि वे अस्थियाँ एक जानवर की हैं, इसके पश्चात् इस फॉसिल से सबकी दिलचस्पी जाती रही। लेकिन भूविज्ञानीय-भविष्य-कथन पद्धति का विकास होने के बाद हम इस विशाल सैलेमैण्डार (एक प्रकार का जलथलचारी जीव) को स्काटलैण्ड के प्रसिद्ध दार्शनिक मैक-काश (McCosh) के लेखों में फिर प्रकट होता हुआ पाते हैं। १८५७ में इस अस्थि-अवशेष की वास्तविकता स्वीकार करते हुए दृढ़ता और निर्भीकता के साथ मैककाश ने कहा : "रीढ़ की हड्डी वाले जीवों के सम्पूर्ण होने से पहले अनेकों दीर्घ युग बीतने थे, मनुष्य के अवतरित होने की तैयारियाँ अभी पूरी नहीं हुई थीं। इतना सब-कुछ होने पर भी श्यूखज़र के इस फॉसिल में अधिक पूर्ण प्रकार के जीव की ऐसी पूर्व-आकृति थी जो मनुष्य के अस्थि-पंजर में है।" इस प्रकार विश्व की हड्डियों के प्रांगण में कार्यरत भूविज्ञानविदों के लगातार चलते हुए फावड़ों से शुरू-शुरू में प्लेटो के दर्शन से प्रभावित रूपों के आध्यात्मिक सौन्दर्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसके बजाय, पहले से जानकारी हो जाने के विचित्र गुण, भविष्य-ज्ञान और विनाश की संवेदनशीलता के साथ भूतकाल में लिपटे जीवन की मान्यता इस सावधानी के साथ व्यवस्थित हो गयी जैसे किसी विशाल रंगमंच की गतिविधियाँ होती हैं।

इसी विचार-दर्शन के प्रकाश में उस 'भारी और अजीब' 'भद्दे आकार' के हाथ की व्यवस्था करनी होगी। यह हाथ, जलथलचारी जीवों के कीचड़ सने झुण्डों, और जबड़े खोलती छिपकलियों से विकसित होकर मनुष्य के प्रकट होने का संभावित पूर्वाभास है। दैत्याकार, और कीचड़ से लथपथ, प्रदर्शित यह अजीब हाथ भविष्य पर हावी है। यह माना जा सकता है कि यह कोयले के दलदलों में भटकते हुए किसी सरीसृप के पैरों की छाप हो, लेकिन साथ ही यह एक रीढ़ की हड्डी वाला जीव भी है। इसका वह शरीर ही आने वाले युग का भविष्य बतलाता है।

यह सोचना गलत होगा कि हमारे भूविज्ञानीय भविष्यवक्ताओं का मुख्य कार्य सरीसृपों तक ही सीमित था। उन्होंने मछलियों, पक्षियों और सैलेमैण्डारों की शारीरिक बनावटों का अध्ययन किया और उनके अस्थि-पंजरों में, मनुष्य के अधिक पूर्ण ढाँचे के—आगे आने वाले रूप के—पूर्वाभास की तलाश की।

यदि उन्हें किसी दुपाये फासिल के पदचिह्न मिल जाते थे तो वह, मनुष्य के भावी आगमन की सूचना होती। प्रत्येक वस्तु उसी ओर इशारा करती। उसके प्रवेश के पहले रंगमंच पर सिर्फ तैयारी भर हो रही थी। इस प्रकार मनुष्य के अहं पर होने वाले आघात की तीव्रता को कम कर दिया गया था। अतीत तो केवल मात्र उस महान् नाटक की पूर्वपीठिका था। आखिर मनुष्य ही इन सब चीजों का केन्द्र-बिन्दु था।

जब हम पीछे की ओर दृष्टि डालते हैं तो यह अर्धशताब्दी, यानी डार्विन की रचना 'प्रजातियों का उद्गम' प्रकाशित होने के पूर्व के पचास वर्ष, विचित्र-सी लगती है। इस काल में एक ऐसी पीढ़ी का प्रभाव था जो कि दुनिया को मनुष्य की ओर संकेत करने वाली, एक जटिल प्रतीकात्मक व्यवस्था के रूप में देखती थी, जिसकी मान्यता थी कि मनुष्य की मूल आकृति शुरू से ही बन रही थी और उसका अस्तित्व शुरू से ज्ञात था। अन्त में आने वाला मनुष्य, इस विचित्र घटना-चक्र का आखिरी भाग है। ऐसे बहुत से विचारकों की दृष्टि में, मनुष्य के साथ ही, विकास का क्रम समाप्त हो जाता है और उसके बाद जीवन के क्षेत्र में किन्हीं और परिवर्त्तनों की आशा नहीं है। चूँकि, कल्पना की उड़ान भरने वाले विकासवादियों का सारा ध्यान मनुष्य पर केन्द्रित था इसलिए अलग-अलग दिशाओं में होने वाले विकास के प्रश्नों और रूपान्तरों की समस्याएँ उनके दिमाग में आसानी से नहीं आती थीं। प्लेटो की अपार्थिवता और अलौकिकता सम्बन्धी धारणाओं के आधार पर अध्ययन और विचार करने वाले लोगों के लिए यह अनिवार्य था कि वे अपने सिद्धान्त को अन्तरिक्ष की गहराइयों से भी दूर तक ले जाने का प्रयत्न करते। चूँकि प्रतिमान में परिवर्त्तन हो सकते हैं, इसलिए अन्य ग्रहों में लघु मानव, विराट् मानव और अलग-अलग रंगों के मनुष्यों के होने से उन्हें कोई परेशानी नहीं होती थी, लेकिन उन्हें होना मनुष्य ही चाहिए। इस तथ्य को हृदयंगम नहीं किया गया कि विकास सम्बन्धी कुछ विचित्र परिस्थितियों के कारण ही मनुष्य ने अपनी विशेष शारीरिक बनावट और सीधे खड़े होने का ढंग, प्रस्तुत किया था, और ये परिस्थितियाँ आसानी से दुहराई नहीं जा सकतीं।

अनेक विश्वों के अस्तित्व का सिद्धान्त बहुत पुराना है, यानी यह विचार कि आकाश में अन्य स्थानों पर जो प्रकाश-बिन्दु दिखाई देते हैं वे उसी प्रकार के विश्व हो सकते हैं जैसा कि हमारी अपनी पृथ्वी है। कापरनिकस के गणित-ज्योतिष के उदय और यह बात समझ लेने के बाद कि हमारी पृथ्वी एक ऐसे ग्रह-मंडल का अङ्ग है जो एक केन्द्रीय सूर्य के चारों ओर घूम रही है, दार्शनिकों ने प्रायः ये विचार प्रस्तुत किये कि आकाश में जो और नक्षत्र-तारे

दिखाई देते हैं वे भी हमारे सूर्य जैसे होंगे और उनके चारों ओर भी हमारे सौर मण्डल की तरह, ग्रहों के मण्डल चक्कर लगा रहे होंगे।

अनेक विश्वों के सम्बन्ध में ईश्वरीय शक्ति को लेकर दो दल बन गये, एक दल उनका था जो तारों के विश्वों में भी ईश्वर की अपरिमित रचनात्मक शक्तियों का हाथ देखते थे। दूसरा दल उनका था जो इस तरह के विश्वास को धर्म-विरुद्ध और मसीही विश्वास के लिए इस अर्थ में खतरनाक समझते थे, कि कहीं वह असीम मस्तिष्क पृथ्वी के लोगों के बजाय बाहर के जीवों से अधिक सम्बन्धित न मान लिया जाय। इन दोनों दलों के बीच झगड़े उठ खड़े हुए। एक अनन्त दूरी तक फैले विश्वों और असीम लघु जगत् के सम्बन्ध में मनुष्य के ज्ञान में बहुत अधिक वृद्धि हो जाने के कारण ही इस संघर्ष में तीव्रता आ गयी थी, दूर-दर्शक और सूक्ष्म-दर्शक यन्त्रों के कारण मानवीय कल्पना तक कुछ समय के लिए स्तब्ध-सी हो गयी थी। कुछ लोग गुस्से से पागल होकर अपनी मध्य-युगीन और छोटी-सी चारों ओर से बन्द दुनिया से चिपके रहे और इन यन्त्रों से जिस नयी दुनिया के रहस्य प्रकट हो रहे थे उन्हें मानने से इन्कार करते रहे। कुछ अन्य लोग ऐसे भी थे जिनमें नई खोजों को स्वीकार करने की अधिक इच्छा थी, फिर भी, वे इन नई बातों को, अपने पुराने विश्वासों के साथ सम्बन्धित करने और एक 'ज्योतिष-धर्मशास्त्र' का विकास करने में लगे थे।

पिछली शताब्दी के उत्तरार्ध के आरम्भिक वर्षों में, पृथ्वी के बाहर दूसरे विश्वों में जीवन की सम्भावनाओं के बारे में जबरदस्त दिलचस्पी पैदा हो गई थी। हाल में ही हमारे ग्रह के जीवन-इतिहास के सम्बन्ध में जो अनुसंधान हुए हैं उन्होंने और गणित-ज्योतिष के सुधरे हुए उपकरणों के कारण जनता की जबरदस्त दिलचस्पी को और अधिक तीव्र कर दिया और जनता कट्टरपंथी धार्मिक सिद्धान्तों और विज्ञान की नई खोजों के बीच कभी इधर झुकती कभी उधर। कई अवसरों पर वास्तविक वैज्ञानिक अध्ययनों से अलग हट, बढ़-चढ़ कर अनुमान लगाये जाते थे।

सन् १८५४ में विलियम व्हेवैल (William Whewell) ने लिखा था : "ऐसा लगता है कि बृहस्पति ग्रह के रहने वाले अवश्य ही उपास्थि या कार्टिलेज के बने हुए सरेसी पिण्ड-जैसे होंगे। यदि वहाँ जीवन है तो यह किसी तरह से भी सम्भव नहीं जान पड़ता कि वहाँ के जीवित प्राणी, अस्थिविहीन, पानी भरे से पिलपिले जीवों से अधिक विकसित हों......।"

इस कथन का उद्देश्य केवलमात्र किसी सीधे-सादे सिद्धान्त की स्थापना नहीं है। अपनी पुस्तक 'विश्वों की अनेकता' (Plurality of Worlds) में

व्हेवेल ने इस बात के निश्चित संकेत दिये हैं कि दूसरे ग्रहों या बाहरी आकाश-गंगाओं के विश्वों में जीवन का अस्तित्व मानने के विचार के वे विरोधी हैं। अधिक-से-अधिक वे केवल इतना ही स्वीकार करने को तैयार हैं कि वहाँ सरेसी-पिण्ड जैसे जीव हो सकते हैं लेकिन मनुष्य भी इन विश्वों में कहीं पाया जा सकता है, इस बात से वे इन्कार करते हैं। वे युक्ति देते हैं कि अन्तरिक्ष में श्रेष्ठ और निम्न कोटि के प्रदेश हैं। अनेक कल्पों तक उस समय के निम्न कोटि के जीवों के बाद उत्पन्न होने वाला मनुष्य अभी एक श्रेष्ठ कोटि का जीव है। वे इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाते हैं कि, अब सृष्टि का विवेकपूर्ण भाग सैकड़ों युगों की लम्बी अवधियों के बीच केवल कुछ ही वर्षों के अन्दर विकसित हुआ है, तो क्यों न विश्वों के असीम विस्तार में यह कुछ ही मीलों तक फैला हो ? इस पृथ्वी पर किसी 'अलौकिक हस्तक्षेप' से मनुष्य की सृष्टि हुई, हमारा यह ग्रह अपने ढंग का एक ही है।

व्हेवैल के निबन्ध से विवाद का जबर्दस्त तूफान-सा उठ खड़ा हुआ। उस समय जो विवाद चल रहा था, उसमें उनकी मान्यता बहुत लोकप्रिय नहीं थी। उनकी पुस्तक के विरोध में सर डेविड ब्रूस्टर (David Brewster) ने एक पुस्तक लिखी, जिसका अर्थ-पूर्ण शीर्षक था 'एक से अधिक विश्व' (More Worlds Than One)। इसमें उन्होंने दो-टूक शब्दों में कहा है, "एक उपग्रह का काम वही होना चाहिए जो दूसरों का होता है। हमारे चन्द्रमा का काम है पृथ्वी को रोशनी देना, यह काम सौर मंडल के अन्य बाईस चन्द्रमाओं का भी होना चाहिये, और पृथ्वी का काम है यहाँ रहने वाले जीवों का पालन करना, इसलिए यही काम अन्य ग्रहों का भी होना चाहिए।" वे 'जीवन की अनन्तता और पदार्थ की अनन्तता के महान् मिलाप पर' विशेष जोर देते हैं।

इसके अतिरिक्त ब्रूस्टर सूक्ष्मदर्शक यन्त्र की मदद से प्रकट, अदृश्य जगत् की ओर ध्यान खींचते हैं और उसके आधार पर कहते हैं, "ईश्वर ऐसे जीव-रूप की ओर भी पूरा-पूरा ध्यान देता है जिसके बारे में हमें कुछ भी पता नहीं है।' आकार की आपेक्षिकता ऐसी रोचक बन गई कि एक लेखक ने ऐसी पुस्तक तक लिख डाली जिसका उपशीर्षक इस प्रश्न के रूप में था, "क्या अन्तिम परमाणु भरे-पूरे विश्व हैं ?" (Are Ultimate Atoms Inhabited Worlds ?) फिट्ज जेम्स ओ ब्राइन की 'हीरे का लेन्ज' (The Diamond Lens) जैसी या रे कमिंग्ज (Ray Cummings) की 'स्वर्णिम अणु की बाला' (The Girl in the Golden Atom) जैसी कहानियाँ इसी प्रकार के विचारों से प्रेरित होकर लिखी गई हैं।

एक दूसरे लेखक विलियम-विलियम्स ने, "ब्रह्मांड कोई मरुस्थल नहीं, पृथ्वी कोई एकाधिकार नहीं" (The Universe No Desert, the Earth No Monopoly) नामक पुस्तक में इसी तर्क को अधिक हृदयस्पर्शी ढंग से प्रस्तुत किया है। वे भूविज्ञानीय भविष्यकथन की दुहाई देते हैं और उसे सीधे अन्तरिक्ष के दूसरे छोर तक ले जाते हैं, "रीढ़ की हड्डी वाले निचली श्रेणी के जीवों में मनुष्य के मूल रूप में विद्यमान होने का विचार यह सिद्ध करता है कि ईश्वर को पहले से ही मानव के अस्तित्व की जानकारी थी, यह बात उसी रूप में, बृहस्पति या नेपचून ग्रहों के रीढ़दार जानवरों पर भी उसी प्रकार लागू होती है, जैसे पृथ्वी के, और इतना ही नहीं, यह बात इससे भी दूर सम्पूर्ण ब्रह्मांड पर लागू होती है, क्योंकि ये जीव उसके सीमा-क्षेत्र के अन्दर हैं।"

इस प्रकार की भावनाएँ व्यक्त करने वाले विलियम्स न तो पहले व्यक्ति थे न अन्तिम, लेकिन उन्होंने ऐसा अपनी सम्पूर्ण शक्ति और उद्देश्य के प्रति निष्ठा के साथ किया। जीवन की योजनाएँ सर्वव्यापी, त्रिकाल में फैली और पार्थिव जगत् से परे की थीं। इसलिए उन्हें अन्तरिक्ष के दूसरे छोर पर भी विस्तृत किया जा सकता है। वे उसी प्रकार भयभीत होकर पूछते हैं जैसे कि रेवरेंड श्री किर्बी ने सरीसृप-युग के प्रति प्रकट किया था कि ईश्वर क्यों "अपने रूप को एक छोटे-से बाड़े में निर्वासित करे और अपने विराट् व्यक्तित्व के शेष भाग को विवेकहीन, अधकचरे और भद्दे दैत्यों से घिरा रखे?" यदि मनुष्य यहाँ पृथ्वी पर एक उत्कृष्ट रचना माना जाता है तो उसी तरह के अनेकों मनुष्य समस्त ब्रह्मांड में पाये ही जाने चाहिएँ। इस पृथ्वी की चट्टानों के जो रूप, लक्षण आदि हैं, वे ही समस्त सृष्टि के भी हैं।

भूविज्ञानीय-भविष्य-कथन की इस योजना को तोड़-फोड़ कर नष्ट करने में बहुत से लोगों ने योगदान किया, लेकिन इस मुर्दे को दफन करने वाला व्यक्ति चार्ल्स डार्विन था जिसने ऐसे सिद्धान्त की स्थापना की जो मानवीय अहं पर ऐसा घातक प्रहार था जैसा कि उसे पहले कभी सहन नहीं करना पड़ा था, यानी निम्न श्रेणियों के जन्तुओं के साथ मनुष्य का भौतिक सम्बन्ध। फिर भी यह बात बिल्कुल स्पष्ट दिखाई पड़ती है कि डार्विन की खोजों का एक ऐसा भी पहलू है जो कभी भी जन-साधारण की समझ में नहीं आया। वह यह तथ्य है कि जब एक बार अनियंत्रित विभिन्नता और प्राकृतिक चुनाव, पेड़-पौधों और जीवों के विकास का नियंत्रण करने वाली व्यवस्था के तौर पर लागू हो जाते हैं तो अन्तरिक्ष के प्रत्येक विश्व का विकास एकदम निराली ऐतिहासिक घटनाओं की शृंखलाओं का रूप ले लेता है। जब एक-सी परिस्थितियों में भी संयोगवश किसी जटिल जीवन-रूप का ठीक वैसा ही बन सकना बहुत

कठिन है तो किसी नितान्त दूरस्थ विश्व की अलग ही पृष्ठभूमि और अलग ही वातावरण में इस तरह की सम्भावना के बारे में कैसे कुछ कहा जा सकता है ?

अन्तरिक्ष यात्रा सम्बन्धी आधुनिक साहित्य में मैंने गोभी-मानव, और पक्षी-मानवों के बारे में पढ़ा है, मैंने गोधिका-मानव (Lizard Man) और वृक्ष-मानव की प्रेम-कहानियाँ पढ़ी हैं। परन्तु कभी भी मैंने यह प्रयास किसी भ्रम के कारण नहीं किया। मैं इन सब किस्सों में एक मानव 'होमो-सैपियन' के बारे में पढ़ रहा था, पृथ्वी के उस साधारण बच्चे के बारे में जिसे परों-पंखों के ढीले-ढाले कपड़े पहिनाये गये थे और उसमें मनुष्य की सभी विशेषताएँ, यहाँ तक कि उस हसीन लड़की पर निगाह डालने की चाह भी थी जो अभी-अभी अन्तरिक्ष यान से उतरी थी। उसकी कामासक्ति और अपने से भिन्न वर्ग के प्राणियों से यौन सम्बन्ध स्थापित करने की प्रवृत्ति में विचित्र-सी मानवीय छाया प्रतीत होती है। यदि दूसरे ग्रहों में हमें यही सब-कुछ मिलने वाला है तो मैं अकेला अपने ही घर में रहने में सन्तुष्ट हूँ। समस्त नक्षत्र-मंडल में इस वस्तु को प्रोत्साहित किये बिना ही, इस तरह की चीजें, यहाँ हमारी पृथ्वी पर पर्याप्त हैं।

सत्य यह है कि मनुष्य अपने ढंग का एक ही और विचित्र जीव है। मैं यह बात किसी तिरस्कार या घृणा की भावना से नहीं कह रहा हूँ। मैं केवल इस बात की ओर ध्यान खींचना चाहता हूँ कि जब चार्ल्स डार्विन और उनके सहयोगियों ने जीव-जगत् के एक ही वंशक्रम की स्थापना की और साथ ही जब विकास की परिस्थितियों के अनुकूल जीवों की विभिन्न विकासधाराओं के तथ्य को ढूँढ़ निकाला तो भूविज्ञानीय भविष्य-कथन की विचारधारा हमेशा के लिए नष्ट हो गई। उन्होंने दूसरे ग्रहों में जीवन होने की सम्भावना को समाप्त नहीं किया लेकिन उन्होंने जिन प्राणि-विज्ञान सम्बन्धी सिद्धान्तों की स्थापना की उससे इस बात की सम्भावना पूरी तौर से खत्म हो जाती है कि हमारी सन्तानें अगले कुछ दशकों में, मंगल-ग्रह से आये हुए लघु मानवों का स्वागत करेंगी। इसके बजाय मैं एक लाल पौलिप (purple polyp) के साथ बैठकर दोपहर का खाना खाने की सम्भावना पर विचार करना अधिक पसन्द करूँगा, लेकिन इसकी भी शारीरिक बनावटों के आधार पर इसी ग्रह के जीवन से तुलनाएँ दी जा सकती हैं।

भूविज्ञानीय भविष्य-कथन दो बातों पर आधारित था : पहली, जैसा कि हम देख चुके हैं समस्त ब्रह्माण्ड का केन्द्र मनुष्य को मानना और दूसरी यह मान लेना क्योंकि भूतकाल के जन्तुओं का आधुनिक युग के जन्तुओं से कोई भौतिक संबंध

नहीं है इसलिए सृष्टि के रचयिता के मस्तिष्क की किसी अलौकिक अपार्थिव योजना के कारण भूतकाल के जीवों का सम्बन्ध आधुनिक जीवों से जुड़ा है। उन्नीसवीं सदी के आरम्भिक वर्षों के विचारकों ने एक सही वास्तविक सम्बन्ध भाँप तो लिया था लेकिन 'विशिष्ट रचना' के विचार के कारण उन्हें इस बात को मान्यता देने में रुकावट पड़ी कि सभी जीवों के आपसी सम्बन्ध सभी रूपान्तरों-सहित वंश-परंपरा के आगे बढ़ने के कारण बने हैं।

मनुष्य का पैदा होना शुरू से पूर्वनिर्दिष्ट या पूर्व-निश्चित होने की बात केवल इसी कारण सिद्ध नहीं की जा सकी क्योंकि उसका पुरा-जीव-काल के रीढ़दार जन्तुओं से सादृश्य था। उसकी बजाय वह, आरम्भिक रीढ़दार जानवरों की परम्परा में उत्पन्न होने वाले अनेक प्रकार के वंशजों में से एक था। मनुष्य की तरह ही एक हिरन या नेवला भी आधुनिक रीढ़दार जानवर होने के नाते यह दावा कर सकता है कि उनकी आकृति आरम्भ से ही पूर्व-निश्चित थी और ब्रह्माण्ड का संगठन उन्हीं को ध्यान में रख कर किया गया था।

वह स्थिति कुछ-कुछ इस प्रकार है मानो कोई जादुई शीशों के हाल से गुजर रहा हो और अलग-अलग शीशों में उसकी तुड़ी-मुड़ी आकृतियाँ उभर आई हों। समय का जादुई शीशा इसी तरह सबकी आकृति बदल देता है और बदली हुई आकृति स्थायी हो जाती है। फिर भी कुछ किस्मों का विशिष्ट प्रतिमान होता है, जैसे कि आप एक शीशे के पास पहुँचते हैं जो मानवों की आकृति बनाता है, और कहीं आपके पीछे एक ऐसा शीशा है जिसमें काली बिल्लियाँ बनती हैं, इतना सब होने पर भी आप इन सभी आकृतियों में एक ऐसा आकार देख सकते हैं, जिसके कुछ-न-कुछ लक्षण सब में पाये जाते हैं। आपमें और बिल्ली में एक सम्बन्ध है, मूल आकार के अल्प अंश आपकी हड्डियों में हैं और आदिम विचारधारा के अन्य अंश आप दोनों की आँखों में घूमते हैं, और आप दोनों उसे समझते हैं। लेकिन कहीं-न-कहीं एक मूल रूप आकृति विद्यमान रही होगी, कहीं-न-कहीं बिल्ली, मनुष्य और वीज़ल, एक ही रूप में भागते-फुदकते रहे होंगे। लेकिन वह आकार, अब हमसे बहुत दूर, समय-प्रवाह के पिछले छोर पर कहीं इतना दूर है कि हम उनके बारे में सोच नहीं सकते। यह ऐतिहासिक घटना है। इस अर्थ में और केवल इसी अर्थ में, मूल-आकृति (Archetype) का अस्तित्व अवश्य था।

डार्विन ने स्पष्टतया इस बात को समझा कि इस ग्रह के जीवन की क्रमिक वंश-परम्परा बाहर से लादी हुई कोई औपचारिक रूपरेखा नहीं थी और उसके विकास की गति भी केवल एक ही दिशा की ओर नहीं थी। जीवन चाहे जो कुछ भी हो, वह कोई स्थिर वस्तु नहीं था बल्कि परिस्थितियों के अनुसार बदल

सकता था। इसने कठिन-से-कठिन वातावरण में से रास्ता निकाल लिया था। यह एक ऐसे रास्ते होकर, स्थिति के अनुसार रूप में परिवर्तन करता और आवश्यकता होने पर पुनः रूप-परिवर्तन करता हुआ आगे बढ़ता रहा, इस रास्ते से वह फिर पीछे की ओर नहीं लौटा। इस धरती का प्रत्येक जीवित प्राणी, एक अद्वितीय घटनाक्रम का परिणाम है। आँकड़ों और अध्ययनों के आधार पर दूसरे ग्रहों में इनका ठीक प्रतिरूप वर्त्तमान होने की सम्भावना इतनी कम है कि उसे व्यर्थ ही मानना चाहिए। जीवन, यहाँ तक कि कोशीय जीवन, अन्तरिक्ष में कहीं भी हो सकता है। फिर भी प्रकृति में जीवन का यह रूप चाहे उच्च कोटि का हो या निम्न कोटि का, वह मनुष्य-रूप ग्रहण नहीं कर सकता है। जीवन का यह रूप, वन-वृक्षों की शाखाओं की चोटियों से होकर, एक विचित्र, दीर्घकालीन यात्राओं के बीच हुए क्रमिक विकास का परिणाम है, और इस लम्बी प्रक्रिया में असफल होने की इतनी अधिक सम्भावनाएँ हैं कि उसी रास्ते से फिर चलकर आने वाली कोई भी वस्तु, ठीक-ठीक और हूबहू मनुष्य-रूप धारण नहीं कर सकती।

जैसे-जैसे मैं ये बातें लिख रहा हूँ, मेरे आगे बहुत पहले के उस लघु-मानव की तस्वीर उभर रही है। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ कि वह एक अप्राकृतिक ढंग से विकसित भ्रूण था, जिसकी बहुत पहले वैज्ञानिक तौर पर जाँच करके उसे व्यर्थ की वस्तु घोषित कर दिया गया था। उसकी जिस छोटी-सी खोपड़ी से, उसके परिपक्व होने का धोखा होता था, उसके अन्दर एक ऐसा मस्तिष्क था जो विकसित नहीं हो सका था। दो पैरों के मनुष्य का वर्णन करने वाले यह भूल जाते हैं कि एक सामान्य मानव-मस्तिष्क कम-से-कम नौ सौ घन सैण्टीमीटर से कम क्षमता होने पर काम नहीं कर सकता। जिस मनुष्य का मस्तिष्क केवल एक सौ घन सैण्टीमीटर का हो, वह उड़न-तश्तरियों का निर्माण नहीं कर सकता, वह एक वनमानुष से भी कम बुद्धि का होगा। कुछ भी हो, इस तरह के किसी मनुष्य का अस्तित्व नहीं है।

एक ब्रह्माण्ड, जिसकी लम्बाई-चौड़ाई मानव-कल्पना से परे है, जहाँ हमारी दुनिया शून्य के अन्धकार में एक रेत-कण के सदृश तैर रही है, उस दुनिया में मानवों का विकास कल्पनातीत एकाकीपन में हुआ है। हम समय के पैमाने में और स्वयं जीवन को परिचालित करने वाली व्यवस्था में, उस अदृश्य-अनजान के संकेत और शगुन-अशगुन खोजते हैं। इस ग्रह के केवल-मात्र विचारशील स्तनपायी होने के कारण या शायद नक्षत्र-मण्डलों सहित सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के एकमात्र विचारक होने के नाते हमारे ऊपर चेतना का बोझ भारी होता जा रहा है। हम नक्षत्रों पर नजर रखते हैं, लेकिन वहाँ से हमारे आने के

प्रमाण संदिग्ध हैं। हम भूतकालीन जीवों की हड्डियाँ खोद कर अपना उद्गम खोजते हैं। वहाँ एक रास्ता है परन्तु वह बहुत चक्करदार-सा लगता है। हो सकता है कि रास्ते की विघ्न-बाधाओं का भी एक अर्थ हो, इस प्रकार विभिन्न प्रकार से हम अपने-आपको परेशान करते हैं।

रात्रिकालीन-आकाश में चमक होती है और लुप्त हो जाती है। अन्त में, मनुष्य स्वनिर्मित वस्तुओं से ही परेशान होकर नींद में करवटें बदलते हुए दुःस्वप्न देखते हैं या बिस्तर पर पड़े जागते रहते हैं जबकि इस बीच उसके ऊपर आसमान से स्फुट ध्वनि करते हुए उल्कापात होते हैं। लेकिन सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में या हजारों विश्वों में कहीं भी कोई ऐसा व्यक्ति नहीं होगा जो मानवों के इस एकाकीपन में हिस्सा बँटाता हो। हो सकता है कि अन्तरिक्ष के किसी दूसरे छोर पर कहीं बुद्धि का अस्तित्व हो, शक्ति हो, विचित्र कार्य-कुशल अङ्गों द्वारा संचालित कुछ विशाल यन्त्र हमारे तैरते हुए बादली-ग्रह की ओर देख रहे हों। हो सकता है कि उन यन्त्रों के नियन्त्रणकर्ता उसी तरह से बेचैन हों जैसे कि हम। इस सबके बावजूद, जीवन की प्रकृति में और विकास के सिद्धान्त में, हमें अपना उत्तर मिल जाता है। इस पृथ्वी के परे, दूसरी जगह, मनुष्य कभी कहीं नहीं पाये जायेंगे।

३. पक्षियों का निर्णय

●

सभी धर्मों, यहाँ तक कि अत्यन्त पुराने आदियुगीन धर्मों में भी यह माना जाता है कि जो मनुष्य दिव्य दृष्टि और अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना चाहता है, वह अपने साथियों से अलग होकर, कुछ समय के लिए एकान्त या निर्जन स्थान में रहे। यदि वह उपयुक्त व्यक्ति हुआ तो वह एक सन्देश लेकर लौटेगा। हो सकता है कि उसे ईश्वरीय सन्देश प्राप्त न हो, जिसके लिए उसने साधना शुरू की थी, फिर भी यदि वह अपने इस विशेष काम में असफल हो भी जाय तो भी उसे कोई दृश्य या चमत्कार अवश्य दिखाई पड़ा होगा, और इस तरह के अनुभव हमेशा सुनने और विचार करने योग्य होते हैं।

मेरा यह विश्वास हो चला है कि यह विश्व बहुत ही विचित्र प्रकार का स्थान है, परन्तु इस विचित्रता के हम इतने लम्बे समय से एक अंश या भाग बने हुए हैं कि हम इसे तथ्य रूप में स्वीकार करने लगते हैं। हम अपने अनूठे ढंग के उद्देश्यों के पीछे पागलों की भाँति इधर-उधर दौड़ते फिरते हैं और सदा यही सोचते रहते हैं कि हमारे आस-पास की दुनिया एक दम उबा देने वाली है और हम स्वयं एकदम सामान्य से जन्तु हैं। सच तो यह है कि इस प्रकार के विचार को प्रोत्साहित करने वाली कोई ऐसी वस्तु इस विश्व में नहीं है, फिर भी मानव-मन में इसी तरह की तरंगें उठती हैं। यही कारण है कि जीवन के प्रति अपनी कम होती रुचि को फिर से सजीव करने के लिए मनुष्य समय-समय पर अपने दूतों को महान् घटनाओं की जानकारी प्राप्त करने या अपने सम्बन्ध में होने वाली भावी बातों का पता करने की आशा से एकान्त में भेजना जरूरी

समझने लगता है। वह जानता है कि जब तक उसमें स्वाभाविक अविश्वास का लेशमात्र भी शेष है तब इस मामले में उसकी विशाल समाचार-सेवाएँ, संसार भर में फैली रेडियो-व्यवस्था उसके कुछ काम नहीं आयेंगी। कोई भी चमत्कार एक रेडियो-प्रसारण का मुकाबला नहीं कर सकता और यह निश्चित है कि यदि कोई ऐसा कर भी सके तो वह चमत्कार नहीं होगा। इसलिए उसी की खोज करनी होगी जोकि केवल एकान्त उपासना अर्थात् दैवीय ज्ञान से प्राप्त हो सकता है।

यह समझ लेना अवश्यक है कि मैं उस श्रेणी का व्यक्ति नहीं हूँ जिसे महान् घटनाओं या भावी का सीधा ज्ञान होता है। परन्तु एक प्रकृतिविज्ञ अपना अधिकतर जीवन अकेले ही गुज़ारता है और इस मामले में मेरा जीवन अपवाद नहीं है। यहाँ तक कि न्यूयार्क जैसे नगर में भी कुछ निर्जन भाग हैं, और जिस श्रेणी की मैं चर्चा कर रहा हूँ उस श्रेणी के लोगों को स्वयं कोई-न-कोई विशेष अनुभव होना अवश्यम्भावी है। इसलिए मैं अपने अनुभव प्रस्तुत करता हूँ, कबूतरों का एक प्रसंग, रासायनिक पदार्थों की एक उड़ान और चिड़ियाओं का एक निर्णय। मैं इस आशा से अपने अनुभव प्रस्तुत कर रहा हूँ कि ये उन लोगों को जँचेंगे जिनमें अद्भुत के प्रति वास्तविक रुचि विद्यमान है और जो साधारण घटनाओं के प्रवाह में भी ऐसे स्थलों को पहचानने में समर्थ हैं जहाँ पर लौकिक जगत् किसी नितान्त भिन्न परिमाण की वस्तु के लिए स्थान खाली कर देता है।

इस ग्रह की चामत्कारिक प्रकृति का खुल कर आनन्द उठाने के लिए कुल मिलाकर, न्यूयार्क सर्वोत्तम जगह नहीं है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि यहाँ कई अद्भुत कहानियाँ सुनी जा सकती हैं और कई विचित्र दृश्य देखे जा सकते हैं लेकिन किसी चमत्कार को पूरी तरह से हृदयंगम करने के लिए, हर पहलू से उसका आस्वादन करना जरूरी है। शहर की कोलाहलपूर्ण सड़कों पर धक्कम-धक्का करते हुए ऐसा नहीं किया जा सकता। लेकिन यह सब होने पर भी हर शहर में ऐसे वास्तविक निर्जन स्थान होते हैं जहाँ कोई भी बिलकुल अकेला रह सकता है। यह किसी होटल के कमरे में, या पौ फटते समय किसी ऊँची छत पर हो सकता है।

एक रात, शहर-बीच एक होटल की बीसवीं मंजिल पर मैं अँधेरे में नींद से जगा और बेचैनी अनुभव करने लगा। किसी अज्ञात इच्छा से प्रेरित होकर मैं पुराने ढंग की खिड़की की चौखट पर चढ़ा और पर्दों को खोल कर मैंने बाहर झाँका। ब्राह्म मुहूर्त्त का समय था, ऐसा समय जबकि लोग नींद में उसाँसें भरते हैं अथवा यदि जगे हुए हों तो अपनी अस्थिर दृष्टि को छाया में से
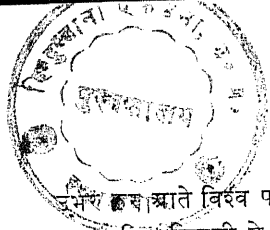
उभर कर आते विश्व पर केन्द्रित करने की चेष्टा करते हैं। आँखों में नींद भरे अपना सिर खिड़की से बाहर निकाल झुक गया। मुझे नीचे गहराइयाँ देखने की आशा थी, उसकी नहीं जो मुझे दिखाई पड़ा।

क्या देखता हूँ कि उस ऊँचाई से नीचे विचित्र प्रकार की गुम्बदों और छतरियों की कतारें हैं और अँधेरे में मैं उन्हें मुश्किल से पहचान पाता हूँ। कुछ देर तक देखने के बाद उन छतरियों की रूपरेखा अधिक स्पष्ट हो गई क्योंकि उस पूर्ण शान्त वातावरण में शहर के ऊपर चारों ओर कबूतर उड़ने शुरू हो गये थे और कबूतरों के पंखों से टकराकर आती हुई मद्धम रोशनी उन पर पड़ रही थी। गुम्बदों के बीच खुली हुई दरारों के, बाहर-भीतर होते हुए, ये श्वेत पंखों वाले पक्षी अपने रहस्यमय उद्देश्य पर जा रहे थे। इस समय शहर पर उनका साम्राज्य था और वे चुपचाप, उस ऊँची अजीब भयावनी जगह में किसी भी पत्थर से टकराये बिना मैनहैट्टन के ऊपर मँडरा रहे थे। उनके झुण्ड-के-झुण्ड मानवीय आँखों से देखे न जा सकने वाले प्रकाश में लगातार ऊपर उड़ते जा रहे थे, जबकि दूर नीचे काले अँधेरे गलियारों में अभी भी अधी रात-सी थी।

जैसे ही मैं आधी नींद में खिड़की की चौखट से और अधिक झुका तो मुझे क्षण भर को ऐसा आभास हुआ कि रात भर में सारी दुनिया बदल गई है जैसा किसी भारी हिमपात के बाद होता है, और मुझे लगा कि यदि मुझे यहाँ से जाना होगा तो ऐसे ही जाना होगा जैसे ये दूसरे निवासी जा रहे हैं, यानी खिड़की से निकल कर। मुझे उस विराट् अतल शून्य में युवा पक्षियों के उसी सीधे-सादे विश्वास के साथ सरक निकलना होगा, उन पक्षियों के विश्वास के साथ, जो इन ऊँची चिमनियों के पहचाने कोटरों और उनके बीच विद्यमान गहराइयों में पले-बढ़े हैं।

मैं कुछ और बाहर को झुक आया। इधर-से-उधर, उधर-से-इधर, सफेद पंख उड़ते जा रहे थे। उनके उड़ने में किसी तरह की आवाज नहीं होती थी। वे जानते थे कि मनुष्य सोया पड़ा है और यह प्रकाश कुछ थोड़े से समय के लिए उनका अपना है। या फिर पंखों के इस नगर में मैंने मनुष्य के बारे में शायद सपना देखा था—निश्चय ही पंखों का यह नगर उसका बनाया हुआ नहीं हो सकता। शायद मैं स्वयं भी इन्हीं पक्षियों में से एक था जो एक क्षण को खिड़की की चौखट पर लड़खड़ाता दूर नीचे के खतरों का दुःस्वप्न देख रहा था।

इधर-उधर चारों ओर पंख-ही-पंख थे। प्रकाश के उस नगर में प्रवेश करने के लिए थोड़े ही साहस की जरूरत थी, खिड़की की चौखट से एक हल्के धक्के की जरूरत थी। मेरे हाथों की मांसपेशियाँ कुछ पूर्वाभास-सा पाकर फड़कने

लगी थीं। मैं चाहता था कि उस शहर में प्रवेश करूँ और प्रथम प्रभात में ही छतरियों के ऊपर दूर उड़ता चला जाऊँ। उस नगर में प्रवेश करने की मेरी इच्छा इतनी बलवती हो गई कि मैं सावधानी से कमरे में लौटा और मैंने हाल का दरवाजा खोला। मैंने अपना कोट कुर्सी पर पड़ा पाया, और उसी समय धीरे-धीरे मेरे सामने यह बात स्पष्ट होती गई कि नीचे जाने के लिए मंजिलों से होता हुआ एक रास्ता है। तब मुझे याद आया कि मैं तो केवल एक मानव मात्र हूँ।

मैंने कपड़े पहने और वापस मानवों के बीच जा पहुँचा। इस घटना के बाद से मैं बराबर इस बात के प्रति सावधान रहता हूँ कि इस प्रकाश के नगर को कभी न देखूँ। मैंने केवल एक बार विचित्र प्रकार उल्टे दृष्टिकोण से मानव की महत्तम रचना को देखा था और वह वस्तुतः उसकी बनाई हुई बिल्कुल नहीं थी। मैं यह बात कभी नहीं भूलूँगा कि वे पंख किस प्रकार चारों ओर मँडरा रहे थे, और उँगलियों के केवल हलके से दबाव से और वायु के स्पर्श मात्र से कोई किस प्रकार छतों के ऊपर होता हुआ दूर जा सकता है। परन्तु यह एक ऐसी अनुभूति है जिसका केवल मुझ तक सीमित रहना अधिक उपयुक्त है। मैं कभी-कभी इसके बारे में इस तरह सोचता हूँ कि मस्तिष्क की गहन गहराइयों के नीचे पंखों की जो स्मृति दबी पड़ी है वह प्रकट होना शुरू होती है और तब तक वेग से चक्कर लगाती है जब तक कि वह सारे मस्तिष्क में छा नहीं जाती, और उनमें मूर्त वस्तुओं के ऊपर से निकलते जाने की अनुभूति होती है परन्तु हलकी-सी, ठीक वैसे ही जैसे कि किसी प्रकार की बाधा आ जाने पर पंख दिशा बदल लेता है।

उल्टे दृष्टिकोण से किसी वस्तु को अनुभव कर सकना कोई ऐसा वरदान नहीं है जो सिर्फ मानव-कल्पना को मिला हुआ हो। मुझे यह सन्देह होने लगा है कि जानवरों को भी इसका अनुभव उनकी अपनी सीमा तक होता है। परन्तु यह अनुभूति उनमें भी मनुष्यों की भाँति कदाचित् ही होती है। इसके लिए उपयुक्त समय का होना जरूरी है, और अनुभव करने वाले को संयोगवश या अपनी इच्छा से एक ही समय दो दुनियाओं की सीमा पर होना चाहिए। कभी-कभी दोनों सीमाएँ इधर-उधर हो जाती हैं या एक-दूसरे के अन्दर तक घुस आती हैं और तभी वह चामत्कारिक बात देखी जा सकती है।

मैंने एक बार, एक कौवे के साथ ऐसा होता हुआ देखा है।

यह कौवा मेरे घर के पास रहता है, हालाँकि मैंने उसे कभी कोई चोट नहीं पहुँचाई, फिर भी वह ऊँचे-से-ऊँचे पेड़ पर दूर ही रहने की खासी साव-धानी बरतता है और आम तौर पर आदमियों से अलग रहता है। उसकी

दुनिया करीब-करीब मेरी दृष्टि की सीमा के बाद शुरू होती है।

जिस दिन यह घटना हुई उस दिन सवेरे सारे इलाके में घना कोहरा छाया हुआ था, ऐसा कोहरा कई वर्षों बाद देखने में आया था। ऊँचाई नाम की वस्तु बिल्कुल नहीं रही थी। सभी हवाई उड़ानें एकदम बन्द थीं, सड़कों पर चलने वाले अपने ही फैलाये हाथों को मुश्किल से देख सकते थे।

मैं, धुँध में रास्ता टटोलता हुआ एक मैदान को पार कर, मोटे तौर पर रेलवे स्टेशन की दिशा की ओर जा रहा था। एकाएक कोहरे के अन्दर से, दो विशाल काले पंख और एक बड़ी-सी चोंच, मेरे इतने करीब से बिजली की तरह फड़कते हुए गुजरी कि मैं ठमक कर पीछे हट गया। वह सारा-का-सारा पक्षी मेरे सिर के ऊपर से पागलों के समान, ऐसे आतंकित स्वरों में काँव-काँव करता, चिल्लाता भागा कि कौवे की आवाज में वैसे स्वर न तो मैंने पहले कभी सुने थे और न आगे भविष्य में कभी सुनने की आशा है।

मैंने अपने को सँभालते हुए सोचा कि वह भटक गया था और घबरा गया था। उसे इस कोहरे में बाहर उड़ कर नहीं आना चाहिए था, ऐसी हालत में यह बेवकूफ किसी चीज से टकरा कर मर सकता है।

उस दिन तीसरे पहर भर, वह चीख मेरे दिमाग में गूँजती रही। कोहरे के बीच में केवल रास्ता भटकना ही इसका कारण नहीं जान पड़ता था—खास तौर से इस कौवे के बारे में मैं अच्छी तरह जानता था कि वह एक घिसा हुआ चतुर पुराना लुटेरा है। मैंने एक बार यह मालूम करने के लिए, शीशे में अपना चेहरा भी देखा कि आखिर मेरे चेहरे में ऐसी क्या बात थी जिसे देख कर वह इस प्रकार विद्रोह कर बैठा था और इतने ज़ोर से चिल्लाया था कि आस-पास के पत्थर तक हिल उठे।

जब मैं उसी रास्ते से होकर घर की ओर लौट रहा था तो उस समस्या का समाधान मुझे सूझ गया। यह चीज मुझे पहले ही स्पष्ट हो जानी चाहिए थी। हम दोनों की अपनी-अपनी दुनिया की सीमाएँ स्थानान्तरित हो गई थीं। स्थानान्तरण का कारण था वह घना कोहरा। मैं उस कौवे को अच्छी तरह जानता था, वह सामान्य परिस्थितियों में, कभी भी मनुष्य के निकट नहीं उड़ता था। यह भी ठीक है कि वह रास्ता भटक गया था, लेकिन उसके भय का कारण इसके अलावा कुछ और था। उसने सोचा था कि वह स्वयं ऊँचाई पर उड़ रहा है और जब कोहरे के बीच से विशाल छाया की तरह मेरे शरीर से उसका सामना हुआ तो उसे वह दृश्य मृत्यु से भी भयंकर और अस्वाभाविक जान पड़ा। उसने एक मनुष्य को हवा पर चलते हुए, कौवे की दुनिया को अपने कदमों से अपवित्र करते देखा था, एक कौवे का मस्तिष्क, अत्यन्त अशुभ घटनाओं की पूर्वसूचना देने वाली जिस वस्तु की कल्पना कर सकता था,

उसने वही वस्तु देखी थी, यानी हवा में चलने वाले आदमी। उसने अवश्य ही यह सोचा होगा कि उसके साथ मेरा सामना छतों के ऊपर सौ फुट की ऊँचाई पर हुआ है।

अब, जब मैं सवेरे स्टेशन की ओर जाता हूँ तो वह मुझे देख कर काँव-काँव करने लगता है, और मुझे अनुभव होता है कि उसके इस स्वर में एक ऐसी मानसिक दुविधा घर कर गयी प्रतीत होती है जिससे उसे अनुभव होता है कि सभी बातें ठीक वैसी ही नहीं होतीं जैसी कि वे दिखाई देती हैं। उसने अपनी हवा की ऊँचाइयों में एक चमत्कार देख लिया है और अब वह दूसरे कौवों जैसा नहीं रहा। उसे मानव-जगत् का, अन्य वस्तुओं के साथ एक ऐसे सापेक्षिक सम्बन्ध के साथ अनुभव हो गया था जो सामान्य रूप से सम्भव नहीं होता। मेरा और कौवे का दृष्टिकोण समान है, हम दोनों की अलग-अलग दुनिया एक-दूसरे के भीतर प्रवेश कर गई है और हम दोनों चमत्कार के अस्तित्व पर विश्वास करते हैं।

यह एक ऐसा विश्वास है जो मेरे अपने मामले में दो अन्य उल्लेखनीय दृश्यों के कारण और पक्का हो गया है। जैसा कि मैं पहले संकेत कर चुका हूँ; मैंने एक बार बहुत ही अजीब रासायनिक पदार्थों को चन्द्रमा के सदृश उजाड़ और दूर तक फैले विशाल प्रदेश में उड़ते देखा है और एक बार अकस्मात्, उससे भी अधिक विधि की विडम्बनावश, मैं एक ऐसी जगह मौजूद था जहाँ चिड़ियाओं के एक दल ने जीवन के बारे में निर्णय दिया था।

प्राचीन समुद्रयात्रियों के नक्शों में इस स्थान का नाम मौवेइसेस टेरेस (Mauvaises Terres) यानी अशुभ प्रदेश बताया गया है। समय बीतने के साथ कई भाषाओं से गुजरता हुआ यह नाम हम अंग्रेजी बोलने-पढ़ने वालों तक पहुँचते-पहुँचते 'बैडलैंड्स' (Badlands) बन गया है। लड़ाई और भगदड़ के क्रूर व्यापार के बीच हिरन की खालों से बने जूतों की कोमल ध्वनियाँ भी कभी इसकी लम्बी-सँकरी घाटियों से होकर गुजरी हैं, परन्तु उस अविस्मरणीय नीरवता को भंग करने वाले ये नितान्त साधारण उत्पात लगभग एक शताब्दी पूर्व समाप्त हो गये थे। यह धरती—यदि इसे धरती कह सकें तो—उतनी ही उजाड़ और जीवनहीन है जितनी कि वह घाटी जहाँ मिस्र के राजाओं को दफन किया गया है। 'राजाओं की घाटी' की ही तरह यह भी एक कब्रिस्तान है, सूखी हड्डियों से भरा ऐसा स्थान जहाँ कभी जीवन था। अब यहाँ चन्द्रमा की वायु-रहित गहरी खाइयों की भाँति गहन नीरवता छायी हुई है।

इसकी चोटियाँ एकदम उजाड़ हैं, कटी-फटी बालुई चट्टानों की आड़ के अलावा कहीं कोई छायादार स्थान नहीं है। इन चट्टानों के निचले भाग अनवरत चलती वायु की चोट से इस तरह कटे हैं कि उनका आकार शराब के

प्यालों जैसा बन गया है । यहाँ की हर वस्तु कट-कट कर गिर रही है, तड़क रही हैं, मटियामेट हो रही है और समय की दीर्घकालीन अदृश्य जलवायु में नष्ट होती जा रही है । प्राचीन ज्वालामुखी के विस्फोटों में निकली राख से, यहाँ की धरती अभी भी अनुर्वरा है और इस उजाड़ प्रदेश के रंग, मृत ग्रहों के एकान्त सूर्यास्तों के जलते रंग हैं । यहाँ मनुष्य कभी-कभार आता है, और जब आता है तो केवल हड्डियाँ जमा करने के उद्देश्य से ।

वायु के अनवरत कठिन झोंके सहने के बाद दिन निकल चुका था और शरद् की शीतल साँझ ढलने लगी थी, मैं एक दैत्य सरट की पीठ की तरह नुकीली पहाड़ी पर चढ़ा और अपनी दिशा खोजने का प्रयत्न करने लगा। सभी दिशाओं में मरुस्थल की लहरें करवटें बदल रही थीं । आकाश का नीला वायुमण्डल, पहाड़ियों के पास गहरा रक्तिम होता जा रहा था । मैंने युगों पूर्व मृत जीवों की पत्थर बनी हड्डियों से भरे थैले को पीठ पर दूसरी ओर रखा और दिग्दर्शक यन्त्र का अध्ययन करने लगा । मैं रात होने से पहले ही अपने डेरे पर लौट जाना चाहता था और सूरज, पहले ही मुँह लटकाये पश्चिम दिशा में डूबने लगा था ।

ठीक उसी समय मैंने रासायनिक पदार्थों की उड़ान शुरू होते देखी । यह छोटे-छोटे काले धब्बों से गुँथा हुआ एक पिंड-सा था जिसमें ये छोटे काले धब्बे तेजी से घूमते, तीर की तरह छूटते और फिर एक-दूसरे से आकर जुड़ जाते थे । यह उत्तर दिशा से, दिग्दर्शक की सुई की तरह अपने मार्ग से बिना भटके मेरी ओर चला आ रहा था । यह कभी सँकरी दैत्याकार घाटियों की बढ़ती हुई छायाओं के बीच दौड़ता हुआ निकला, कभी सूर्य के रक्तिम प्रकाश में चमकती ऊँची पहाड़ियों की चोटी के ऊपर झपटता हुआ उड़ा या फिर क्षण भर को उनकी आड़ में छुप गया । उड़ती हुई मिट्टी और हवा से घिसे-पिटे पत्थरों के मरुस्थल में वे एक हलकी अरण्य-ध्वनि की तरह आये, और जब छोटी-छोटी जीवित गोलियों की तरह रात के अँधेरे में तीव्र गति से गुजरे तो मेरे चारों ओर की हवा उनकी आवाज से भर गई ।

हो सकता है यह आपको कोई चमत्कार न लगे । यह तब तक संभवतः चमत्कार प्रतीत भी नहीं होगा जब तक कि आप साँझ के झुटपुटे में एक निर्जीव जगत् के बीच न खड़े हों, परन्तु जहाँ मैं खड़ा था वहाँ वह चमत्कार ही था । मेरे कदमों के नीचे पाँच करोड़ वर्ष सोये पड़े थे, उन रंभाते हुए दानवों के पाँच करोड़ वर्ष, जो एक ऐसे हरे-भरे जगत् में विचरते थे जो अब पूर्णतया इस प्रकार नष्ट हो गया है कि अब उसका यथार्थ प्रकाश अन्तरिक्ष के सुदूर छोर की यात्रा कर रहा है । उन बीते हुए अदृश्य युगों के रासायनिक पदार्थ मेरे चारों ओर धरती पर बिखरे पड़े थे । मेरे आस-पास अभी भी टिटानोथेरेस,

की चीरफाड़ करने वाले दाढ़ पड़े दिखाई दे रहे थे, ध्वनिहीन पगों से चलने वाले व्याघ्रों के नाजुक नुकीले दाँत बिखरे थे, हड्डियों के वे खोखले कोटर थे जिनमें किसी समय कितने ही विचित्र पुरातन जीवों की आँखें चमकती होंगी। उन आँखों ने हमारी दुनिया की भाँति ठोस वास्तविक दुनिया देखी थी, उनकी उस दुनिया में, नितान्त बुद्धिहीन, जंगली मस्तिष्क विचरा करते थे, जो भभकती रातों में गरजते-चीखते थे।

वे अब भी यहीं थे, या जैसा कि आप कहना चाहेंगे, अतीत के उन जन्तुओं का निर्माण करने वाले वे रासायनिक पदार्थ यहीं मेरे चारों ओर धरती पर बिखरे पड़े थे। कार्बन, जो कभी उन जीवों को गतिशील बनाये था, अब घिसते हुए पत्थरों में काली-काली रेखाओं के रूप में विद्यमान था। मिट्टी में जहाँ-तहाँ लोहे के दाग पड़े थे। इस लोहे को उस रक्त की याद नहीं थी जिसके अन्दर वह जीवित प्राणियों की रगों में दौड़ा करता था, वहाँ मिट्टी में मिले फ़ासफोरस ने उन असभ्य जंगली मस्तिष्कों को भुला दिया था। रासायनिक पदार्थों के उन विचित्र यौगिकों से जीवन का वह एक छोटा अकेला क्षण इस प्रकार प्रवाहित होकर बह गया था, जैसे कि यह किसी दिन हमारे जीवित शरीरों से निकल कर आने वाले समय की नालियों-पनालियों में उतर कर बह जायेगा।

मैंने उस धरती से मुट्ठी-भर मिट्टी उठाई। उसे तब तक हाथ में थामे रहा जब तक कि दक्षिण दिशा की ओर जाने वाले उन कूजनी पक्षियों की उन्मत्त उड़ान मेरे ऊपर होकर अँधेरे में विलीन नहीं हो गयी। उनमें फास-फोरस उड़ रहा था, लोहा उड़ रहा था, उन उड़ते-भागते पंखों में कैल्शियम फड़क रहा था। एक मृत ग्रह पर अकेला खड़ा मैं उस अविश्वसनीय चमत्कार को अपनी आँखों से गुजरता देख रहा था। यह चमत्कार जैसे किसी वास्तविक दिशानिर्देशक यन्त्र के सहारे उस मैदान और उजाड़ प्रदेश से होकर भाग रहा था। इनमें से प्रत्येक अपने रोमांचक अनुभवों की कहानी हवा में पुकार-पुकार कर इस तरह कह रहा था कि उस आवाज से सारी घाटी के गलियारे गूँजने लगे थे। वे एक मन, एक काया की तरह मुड़ जाते, वे स्वयं अपने-आपको पहचानते थे और एकाकी, उस भागते हुए अन्धकार में, वे एक-दूसरे के करीब आकर आपस में गुँथ जाते, उनमें से प्रत्येक अपने चारों ओर रात के बढ़ते अँधेरे को अनुभव करता था। तो इस तरह, एक दूसरे को चिल्ला-चिल्ला कर अपना परिचय देते हुए, वे निकल गये, मेरी आँखों से दूर ओझल हो गये।

मैंने अपने हाथ की मुट्ठी-भर मिट्टी को नीचे गिरा दिया। मैंने पहाड़ी के नीचे खाई में उस निर्जीव पदार्थ के लुढ़कने की आवाज सुनी, लोहा, कार्बन, जीवन के रासायनिक पदार्थ। मुझ से पहले जिन जंगली कबीलों के मनुष्य दिव्य दृष्टि

की खाज में इन पहाड़ियों में घूमे-फिरे थे, उन्हीं की तरह मैं भी महान् अन्धकार में अपना एक चिह्न छोड़ आया। यह उपहास करने का चिह्न नहीं था और न मेरा ही किसी ने उपहास किया था। बहुत रात ढले, जब मैं डेरे में पहुँचा तो आग के पास सोये हुए एक आदमी ने, कम्बल से सिर उठा कर, उनींदे स्वर में पूछा, "आपने क्या देखा ?"

मैंने धीरे से जवाब दिया "मेरा खयाल है कि मैं एक चमत्कार देख कर आया हूँ" लेकिन मैंने यह बात खुद अपने आप से कही थी। मेरे पीछे वह विशाल प्रदेश, उदय होते चन्द्रमा के प्रकाश में दमकने लगा था।

मैंने पहले कहा है कि मैंने जीवन पर एक निर्णय होते देखा था और यह निर्णय मनुष्यों ने नहीं दिया था। जो लोग पिंजरों में बन्द पक्षियों को देखते हैं या जो उनके मस्तिष्कों की क्षमता मानव मस्तिष्क की तुलना करके निश्चित करते हैं, वे शायद इस निर्णय की चिन्ता न करें। मेरा यह अनुभव, बहते हुए पानी और हरे-भरे वृक्षों के एक प्रदेश में बहुत पहले का है। यदि सौ वर्ष तक भी जिन्दा रहूँ तो भी अब आगे मैं इस प्रकार की घटना होते हुए नह देख सकूँगा, और साथ ही मैं यह सोचता हूँ कि लाखों में एक आदमी ने भा शायद ही ऐसा कभी देखा हो, क्योंकि ऐसे निर्जन स्थानों में मनुष्य का प्रवेश अनधिकृत होता है। इसके लिए उचित प्रकाश होना चाहिए और देखने वाला स्वयं दिखाई नहीं देना चाहिए। कोई भी व्यक्ति इस प्रकार का प्रयोग नहीं करता है। जो कुछ भी वह देखता है, वह अकस्मात् ही देखता है।

आप इसे यों समझिये कि मैं, फर्न और देवदारु के सुई जैसे पत्तों के ऊपर से लगभग आधा दिन बराबर घिसता-रगड़ता पैदल चल कर एक पहाड़ पर पहुँचा था, और वृक्षों के बीच होकर बन गये छोटे-से रास्ते के किनारे मैं एक ठूँठ से पीठ सटा कर सुस्ताने के लिए बैठ गया था। इस कुंज के ऊपर किसी पेड़ की लम्बी और टेढ़ी-मेढ़ी शाखा आरपार छाई हुई थी। संयोग की बात है कि मैं इस रास्ते के किनारे कुछ इस तरह से बैठा हुआ था कि मैं तो उस खुले भाग के सारे हिस्से को अच्छी तरह देख सकता था, लेकिन वहाँ से मुझे कोई नहीं देख सकता था।

इस जगह आरामदेह गर्म धूप छाई हुई थी। बैठे-बैठे वन-जीवन की मर-मर ध्वनि सुनते-सुनते मुझे नींद आ गई। जब मैं जागा तो मुझे धुँधला-सा आभास हुआ कि जंगल के खुले भाग में कुछ शोर की और किसी के चीखने की आवाज आ रही है। देवदारु के पेड़ों से होकर सूर्य की किरणें कुछ ऐसे तिरछे ढंग से पड़ रही थीं कि जंगल का वह खुला हिस्सा एक विशाल गिरजाघर की तरह जगमग हो रहा था। मैं सूर्य की किरणों में, पेड़ों के पराग के सूक्ष्म धूलि

कणों को तैरते हुए देख सकता था और वहाँ उस फली हुई टेढ़ी शाखा पर एक बड़ा-सा कौवा अपनी चोंच में तड़फड़ाते हुए चिड़िया के बच्चे को दबोचे बैठा था।

जिस आवाज से मैं जागा था वह उस बच्चे के अत्याचार-पीड़ित माता-पिता की चीखें थीं जो उस खुले भाग में निरसहाय चक्कर लगाते उड़ रहे थे। चिकने काले रंग के उस दानव का उनके प्रति पूर्ण रूप से उपेक्षा भाव था। उसने बच्चे को निगला, सूखी शाखा पर कुछ क्षण अपनी चोंच को तेज किया और फिर चुपचाप बैठ गया। इतना सब होने तक वह दुःखान्त नाटक सदा की भाँति सामान्य रूप से चलता रहा लेकिन इसके बाद एकाएक उस जंगल के सारे प्रदेश से शिकायत की हलकी आवाज उठनी शुरू हुई। उस नन्हे बच्चे के माता-पिता की चिंतातुर ध्वनि से खिंचकर आधे दर्जन किस्म के छोटे-छोटे पक्षी उस खुले भाग में पंख फड़फड़ाते, भागे आये।

उस बड़े काले कौवे पर हमला करने का किसी का साहस नहीं हुआ। पर शोकाकुल परिवार समेत वे सब, सहज प्रवृत्ति से उस दुःख को समान रूप से अनुभव कर रहे थे और चीख रहे थे। जंगल का वह खुला भाग उनकी चीख-पुकार से भर उठा था। वे इस तरह पंख फड़फड़ाते हुए उड़ रहे थे मानो हत्यारे की ओर संकेत कर रहे हों। उसने एक ऐसा धुँधला-सा अस्पष्ट नैतिक नियम तोड़ा था जिसे वे सब जानते थे। वह काला दानव मृत्यु का पक्षी था।

और वह हत्यारा, वह काला पक्षी, भयोत्पादक दानव, सभी को समान रूप से प्रकाशित करने वाले उसी एक ही प्रकाश में, जीवन के बीच स्थिर, अविचलित, अस्पृश्य बैठा रहा।

फिर विलाप बन्द हुआ। तभी मैंने वह निर्णय होते देखा। वह मृत्यु के विरुद्ध जीवन का निर्णय था। इतने प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया जाता निर्णय मैं फिर कभी नहीं देख पाऊँगा, मैं इसे ऐसे लम्बे दर्द-भरे स्वरों में फिर कभी नहीं सुन पाऊँगा क्योंकि वे पक्षी विरोध करते-करते हिंसा को भूल गये थे। वहाँ जंगल के उस खुले भाग की निस्तब्धता में गौरैया की चहचहाहट के स्फटिक निर्मल-स्वर हिचकिचाते हुए उभरे। और अन्त में, उस दर्दभरी फड़फड़ाहट के बाद, एक और चिड़िया ने भी उसमें अपने स्वर मिला दिये, फिर एक और ने गाना शुरू कर दिया, और उनका यह गीत एक चिड़िया से दूसरी और फिर तीसरी चिड़िया के पास जा पहुँचा। आरम्भ में यह गीत कुछ-कुछ हिचकिचाहट से गाया जा रहा था। जैसे कोई अशुभ बात भुलाई जा रही हो और फिर एकाएक उनका उत्साह बाढ़ पर आ गया और वे सब अनेक कण्ठों से मिलकर आनन्दपूर्वक यों गाने लगीं जैसे आम तौर पर पक्षी गाते हैं।

वे इसलिए गा रहे थे क्योंकि जीवन मधुर है और सूर्य-रश्मियाँ सुन्दर हैं। वे उस काले कौवे की उदास-चिन्तित छाया के नीचे गा रहे थे। सीधी-सच्ची बात यह है कि वे उस काले कौवे को भूल चुके थे, क्योंकि वे जीवन के गायक थे, मौत के नहीं।

मैं वायुमंडल में विचरने वाले उन पक्षियों का साथी नहीं था। मेरे हाथ-पैर धरती से बँधे एक ऐसे जीव के हाथ-पैर थे जो पहाड़ों पर, यहाँ तक कि मन की ऊँचाइयों पर भी, इच्छा-शक्ति के विशेष प्रयत्न से ही चढ़ सकते हैं। मैं जानता था कि मैंने एक चमत्कार और एक निर्णय होते देखा है, लेकिन यह मानवीय वरदान, मेरा यह मस्तिष्क, इस पर निश्चय ही सन्देह करने वाला था और दिन-रात अपनी विरोध की भावना से मुझे तब तक परेशान करने वाला था जब तक कि मैं उस पर सन्देह न करने लगूँ जो मैंने अपनी आँखों देखा था। अन्ततः, अन्धकार और सूक्ष्म अनुभूतियाँ मुझे एक बार फिर झकझोरने वाली थीं।

और यह बात उस दिन साबित हुई जिस दिन मैंने एक नसेनी के ऊपर चढ़ कर, जीवन के बारे में एक अध्ययन और किया। शरद् ऋतु की एक बरफीली शाम की बात है, मैं शहर के बाहर की एक सड़क की बत्ती के नीचे झड़ी-सूखी पत्तियों के बीच खड़ा था और उसी समय बर्फ भी गिरने लगी थी। एकाएक मेरा ध्यान सड़क के किनारे नाचती विशाल बाल की तरह की छायाओं की ओर गया। ऐसा लगता था कि ये सब छाया-रेखाएँ एक विचित्र गोल आकृति से जुड़ी हुई हैं जो कि मेरे ऊपर से फैलती चली गयी थीं। इस में गलती की कोई गुंजाइश नहीं थी। मैं एक गोल चक्करदार जाल बुनने वाली मकड़ी की परछाईं के नीचे खड़ा था। सड़क के ऊपर विशालकाय छाया फैलाती हुई वह मकड़ी उस समय अपना जाल बुन रही थी जबकि अन्य सभी जीवित प्राणी शीत से बचने के लिए सिर छुपाने में लगे थे। सड़क के फुटपाथ पर उस मकड़ी के जाल के डोरे भी बहुत बड़े दिखाई दे रहे थे और मैं खुद उस जाल की परछाईं में आधा फँस चुका था।

'हे भगवान्' मैंने सोचा, 'इस मकड़ी ने अपने लिए एक किस्म का लघु-सूर्य खोज लिया है और वह सृष्टि के क्रम को पलटना चाह रही है।'

मैं अपने घर के बाड़े से एक सीढ़ी लाया और वस्तुस्थिति का निरीक्षण करने के लिए ऊपर चढ़ गया। जबकि उसके चारों ओर की दुनिया शिथिल होती जा रही थी, तब बिजली की बत्ती के खंभों से चिपके हुए जाल को अटकाने वाले धागों के बीच वह आराम से गर्मी में अपनी व्यवस्था किये बैठी थी—जीवन-शक्ति का वह बड़ा काला और पीला जीवन-रूप न तो पाले के सामने और न सीढ़ियों के सामने ही हार मानने वाला था। वह रूप मेरी

उपेक्षा कर अपना जाल मजबूत बनाने और सुधारने में लगा रहा ।

मैं सीढ़ी के ऊपर खड़े होकर उसके जगत् का सर्वेक्षण करता रहा, हल्की-हल्की बर्फ मेरे गालों को छू रही थी । जाल के एक ढीले डोरे में, प्रकाश के साथ रंग बदलने वाले हरे झींगुरों के शरीरों के खोल धीरे-धीरे ऊपर-नीचे झूल रहे थे, किसी पतंगे की पंखों की चमकीली आँख का एक टुकड़ा था और एक बड़ी-सी समझ में न आने वाली कोई वस्तु थी शायद साइकाडा (Cicada) कीड़ा (पेड़ों पर रहने वाला कीड़ा जो बेहद शोर मचाता है) हो जिसने जाल में फँसते वक्त छूटने की कोशिश की हो और जाल के धागे उसके चारों ओर लिपट गये हों । इसके अलावा वहाँ पर कई तरह के छोटे-छोटे टुकड़े और नन्हे-नन्हे लाल तथा नीले, अज्ञात कीड़ों के पंखों के हिस्से भी थे जो उस मकड़ी की दुनिया से कभी आ टकराये होंगे ।

मैंने सोचा, किसी दिन ये टुकड़े मटमैले और स्लेटी हो जायेंगे और उनकी चमक जाती रहेगी, बाद में जब ओस पड़ेगी तो उनमें फिर चमक आ जायेगी और ओस की बूँदें जाल के रेशमी धागों पर तब तक अटकी रहेंगी जब तक कि हर चीज प्रकाश के प्रभाव से चमकने न लगे और रूप न बदल ले । मकड़ी की यह दुनिया सचमुच ही एक दिमाग की तरह है जिसकी हर चीज बदलती है और उसी में रहती है । अन्त में, झींगुर के पंखों की तरह अनुभव के यही टूटे-फूटे टुकड़े भर शेष रह जाते हैं ।

मैं उसे निहारता कुछ क्षण वहाँ रुका रहा, कुछ अनिच्छा से इस बात पर विचार करता रहा कि शीतकाल की प्रबल शक्तियों के विरुद्ध इस के इस साहसिक कार्य, गरमी देने वाली प्रकाश की बत्ती पर उसके अधिकार, का अन्त में कुछ परिणाम नहीं निकलेगा और यह सब व्यर्थ है । तो भी मेरे दिमाग में उन चिड़ियाओं की याद ताजा हो आई और उनका वह गान याद आया जिसके स्वर बराबर बढ़ते गये थे और जो जंगल के उस खुले भाग में वर्षों पहले गूँजा था—यह एक प्रकार की निर्भीकता थी, यह एक ऐसा संसार है जहाँ, एक मकड़ी अपने जाल का एक भी डोरा किसी नक्षत्र तक बाँध सकती है तो वह हार मानने या मरने के लिए तैयार नहीं । धीरे-धीरे यह अनुभव होने पर कि जाल और उसके भीतर बैठे पीले प्राणी से अनुभव के उज्ज्वल भंडार में वृद्धि हुई है, इनके मेरे मस्तिष्क की धुँधली सीमाओं के भीतर क्षण भर को चमकने से मैंने सोचा कि हो सकता है कि अन्त में, मनुष्य भी इसी प्रकार संघर्ष करे ।

सीढ़ी से धीरे-धीरे नीचे उतरते समय मुझे इस बात का बोध हुआ कि मस्तिष्क भी अद्भुत वस्तु है, सड़क की एक बत्ती में एक मकड़ी को देखकर उसमें स्वयं अपने-आप साहस भर गया । मकड़ी के इस दृष्टान्त में एक ऐसी चीज है जो हमें भविष्य के उन लोगों को बतानी होगी जो शून्य के साथ, शीत से

जमते हुए ग्रह की अन्तिम लड़ाई लड़ेंगे। मैंने सोचा कि इसे भविष्य के नाम एक सन्देश के रूप में दर्ज कर दिया जाय : "पाले के दिनों में एक लघु सूर्य की खोज करो।"

लेकिन जब मुझे कुछ हिचकिचाहट होने लगी, तो मेरे सामने यह बात स्पष्ट हो गई कि इसमें कहीं कुछ गड़बड़ी है। जो चमत्कार मेरे हाथ से निकला जा रहा था, वह था मनुष्य की शक्तियों की पकड़ से बाहर महत्ता की एक अनुभूति, ब्रह्मांड के साथ अपने महान् सम्बन्धों में जीवन का सार। मैंने तय किया कि एकान्त साधना से भावी का सन्देश लाने वाले दूतों के लिए, चाहे वे एक सीढ़ी से ही क्यों न उतर रहे हों, यह बेहतर होगा कि वे अपने चमत्कार को ज्यों-का-त्यों दर्ज करें और उसके अर्थ की व्याख्या न करें। इस तरह वह लोगों के मनों में गूँजता रहेगा और उनमें से प्रत्येक उसे उस सीमा तक समझेगा जिससे आगे चमत्कार प्रकट होते हैं। उसकी एक बार व्याख्या कर देने से वह मानवीय प्रतीकों की आवश्यकता पूरी करने में असमर्थ हो जायेगा।

अन्त में, मैंने मन-ही-मन, महज़ एक बात नोट कर ली जो इस प्रकार है, एक एपीरा (Epeira—चक्राकार जाल बनाने वाली साधारण बागों की मकड़ी) को, सड़क की बत्ती से जाल बुनते देखा, समय शरद् ऋतु का आखिरी भाग, मकड़ियों के लिए ठंडा मौसम। ऋतु मनुष्यों के लिए भी काफी ठंडी थी। मैंने काँप कर, उस लैम्प को अपने दिमाग में जलता छोड़ दिया। अन्तिम बार जब मैंने उस मकड़ी को देखा तो वह स्थिर-चित्त अपना जाल बुने जा रही थी। मैंने सावधानी से उसकी छाया के ऊपर से कदम रखा और आगे बढ़ गया।

४. पक्षी और मशीन

मैं कल्पना करता हूँ कि वर्षों पहले उनकी नन्ही-नन्ही हड्डियाँ उन ऊँची बर्फानी चरागाहों की हवा में पत्थरों के बीच खो गयी होंगी। मैं कल्पना करता हूँ कि अन्ततः उनके पंख, दूर-दूर तक फैले हुए तार के बाड़ों के नीचे टम्बलवीड के झाड़ों में जा घुसे होंगे, और वहीं पहाड़ी पर जमी बर्फ में मरे मवेशियों और दूसरी चीजों के साथ सड़ते रहे होंगे जो उस तार के कोनों में मिट्टी में मिल गये होंगे। मैं ठीक-ठीक समझ नहीं पा रहा हूँ कि अपने नाश्ते के समय 'न्यूयार्क टाइम्स' अखबार के ऊपर झुका हुआ, मैं, पक्षियों के और खास कर अपनी युवावस्था में कम-से-कम आधे महाद्वीप-दूर देखे हुए पक्षियों के बारे में क्यों सोच रहा हूँ। मस्तिष्क भी स्मृतियों के साथ क्या-क्या खेल खेलता है, किस तरह उन्हें अपने आप में सँजोये रख कर, अन्त में उन्हें दूसरी चीजों के साथ एक अजीब तरह से साथ-साथ रख कर पेश कर देता है, मानो वह कोई चित्र बनाना चाहता हो या उससे कोई अर्थ निकालना चाहता हो, चाहे आप चाहें या न चाहें।

मुझे यह बात बड़ी चामत्कारिक लगा करती थी, लेकिन अब मेरे पढ़ने में आया है कि ऐसी मशीनें भी हैं जो इन कामों को छोटे पैमाने पर कर सकती हैं, ऐसी मशीनें हैं जो जनवरों की तरह रेंग सकती हैं, और वह दिन दूर नहीं है जब मशीनें और भी काम कर सकेंगी—हो सकता है कि वे स्वयं अपनी जैसी मशीनें पैदा करने लगें—मैंने इसी तरह की बातें अभी न्यूयार्क टाइम्स में देखी हैं। और कौन जाने, वे सचमुच ही ये सब करने लगें। लोग रोज मशीनों के

बारे में अधिकाधिक बातें पढ़ते हैं और कोई इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की आपत्ति नहीं करता। मशीनें हम से ज्यादा अच्छी तरह प्रश्न हल कर लेती हैं, ऊपर उड़ सकती हैं, अन्धकार के बीच से देख-सुन सकती हैं और रात्रि-कालीन आकाश के ऊपर तोप-बन्दूकें चला सकती हैं।

यह वही नई दुनिया है जिसके बारे में, मैं अपने नाश्ते के समय पढ़ता हूँ। यही वह दुनिया है जो मेरी प्राणिविज्ञान की पुस्तकों और पत्रिकाओं में मेरे सामने मुँहबाये खड़ी है। जब मुझे इससे फुर्सत मिलती है तो मैं चुपचाप अपनी कुर्सी पर बैठ जाता हूँ और अपने सिर के अन्दर, मशीनी पहियों के दाँतों की कर्र-कर्र सुनने की कोशिश करता हूँ, अपने अन्दर गुज़रते हुए सन्देशों के साथ नलियों के दहकने और नष्ट होने की, और स्नायु-प्रवाहों के सर्किटों के खुलने और बन्द होने की ध्वनि सुनने का प्रयत्न करता हूँ। यह महान् युग है, इसके बारे में कोई गलती न करना; बहुत-कुछ उपयुक्त ढंग से परमाणु-बम के साथ यान्त्रिक मानव का जन्म भी हुआ है और लोग कहते हैं कि मस्तिष्क प्रतिसंभरण (Feed back) की जटिल व्यवस्था से युक्त मशीन हैं। इंजीनियरों ने इसके मूल सिद्धान्त खोज निकाले हैं, यह और कुछ नहीं, एक तरह की यान्त्रिक व्यवस्था है, इस बारे में किसी तरह से अन्ध-विश्वासी होने का कोई कारण नहीं है, और यदि एक बार उपयुक्त जानकारी प्राप्त हो जाय तो मनुष्य प्रकृति द्वारा निर्मित वस्तु से कहीं अधिक अच्छी वस्तु बना सकता है। हाँ तो इस अखबार वाले ने उस विचार को ठीक-ठीक पकड़ लिया है, और मैं अब समझा हूँ कि इसी कारण मैं इस लेख को अपने हाथों में दबोचे हुए अपनी कुर्सी पर जा बैठा हूँ और मुझे उन दो पक्षियों की, उस नीले पर्वत की सुहानी धूप याद आ रही है। मेरी मेज़ पर एक लेख और पड़ा है जिसमें लिखा है, "मशीनें दिन-प्रतिदिन स्फूर्त होती जा रही हैं"। मैं इस बात से इनकार तो नहीं करता लेकिन मैं अभी भी पक्षियों को ही महत्त्व दूँगा। मैं जिस पर विश्वास करता हूँ वह जीवन है, मशीनें नहीं।

हो सकता है कि आपका विश्वास हो कि दोनों में कोई अन्तर नहीं है। एक अस्थिपंजर क्या है, मशीनों की तरह पुर्जों का जोड़-जन्तर, मैं आपकी यह बात मानता हूँ। अट्ठारहवीं सदी में जब मनुष्य ने सामान्य प्रकार की मशीनें बनानी शुरू की थीं तभी उसने दोनों के बीच समानता देख ली थी। तब हौब्स (Hobbes) ने लिखा था, "हृदय क्या है, केवल एक स्प्रिंग, और तन्त्रिकाएँ (Nerves) धागों या तारों के अलावा कुछ नहीं, और जोड़ उतने ही प्रकार के पहिये हैं जो शरीर को चालू रखते हैं।" अपने छोटे-छोटे कार-खानों में ठक-ठक करते हुए मनुष्यों के लिए यह अवश्यम्भावी था कि वे अन्त में दुनिया को एक विशाल मशीन के रूप में देखते, ऐसी विशाल मशीन जो

अगणित छोटी-छोटी मशीनों में बँटी हुई है।

यह विचार तीव्र रूप से जोर पकड़ता गया। नन्हे-नन्हे स्वचालित यंत्र देश-भर में दिखाई देने लगे—चाबी से चलने वाली गुड़ियाएँ, घड़ियाँ जिन्हें छोटी दुनिया कहा जाता था, उनके निर्माताओं द्वारा जगह-जगह घुमाई गई। इस प्रकार की घड़ियाँ, चलते-फिरते आकारों, बदलते दृश्यों और बहुत से दूसरे तौर-तरीकों से बनाई गई थीं। उस समय सूक्ष्म कोशों का जीवन अज्ञात था। उन दिनों मानव—उसमें आत्मा विद्यमान होने की बात स्वीकार की जाती थी या नहीं—दोनों ही हालतों में वह नन्ही कठपुतलियों की तरह इधर-उधर फुदकता फिरता था। वह अपने बारे में अपने औजारों के आधार पर विचार करता था। मनुष्य स्वयं अपनी ही बनाई हुई कठपुतली के ढङ्ग से बनाया हुआ जीव था, अन्तर केवल यह था, कि मानव एक महान् कलाकार का बनाया हुआ अधिक चतुर सुघड़ नमूना था।

फिर उन्नीसवीं सदी में जीव-कोश की खोज होने पर पता चला कि यह एक मशीन लाखों अत्यन्त सूक्ष्म यन्त्रों का मिला-जुला परिणाम है और ये अत्यन्त सूक्ष्म यन्त्र हैं जीव-कोश। और अब ज्ञात हुआ है कि जीव-कोश स्वयं, एक अव्यक्त रासायनिक यन्त्र में विलीन हो जाता है—और यह यन्त्र अवर्णनीय, अग्राह्य शक्ति के प्रवाह में विलीन हो जाता है। लगता है कि यह रहस्य चारों ओर छाया हुआ है, पहिये छोटे और छोटे होते जाते हैं, वे और तेजी से घूमते जाते हैं, लेकिन जब आप उसे पकड़ने की कोशिश करते हैं तो जीवन गायब हो जाता है—इसलिए लोकप्रिय परिभाषा के आधार पर कुछ लोग कह सकते हैं कि उसमें आरम्भ में जीवन कभी था ही नहीं। दाँते और साधारण पहिये ही इसका रहस्य हैं, समय आने पर हम उन्हें अधिक अच्छा बना सकते हैं—ऐसी मशीन बना सकते हैं जो असली पनीर की ओर असली चूहे से भी ज़्यादा तेज़ी और ज्यादा सही ढङ्ग से दौड़ेगी।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसा हो सकता है, फिर भी मैं सोचता हूँ, कि मेरे लिए एक भूलभुलैया के बीच दौड़ने वाले यान्त्रिक चूहे से अधिक सुन्दर दृश्य है शरद ऋतु में जङ्गली बीज इकट्ठा करता हूआ चूहा, अपनी बहुमुखी गतिविधियों में लगा हुआ यह चूहा मेरे लिए यान्त्रिक चूहे से कहीं अधिक पेचीदा है। साथ ही मैं यह सोचना भी पसन्द करता हूँ कि चूहे की भावी संतति का रूप-आकार क्या हो सकता है, ठीक वैसे ही रूप-आकार में परिवर्तन होगा जैसे कभी एक निहायत मामूली चूहे जैसे कीट-भक्षी जन्तु के बच्चों में हुआ था जो आगे चलकर मनुष्य बना। इस बात में एक आश्चर्यभरी, ऐसी अनजान अनुभूति होती है जो एक इलैक्ट्रानिक मस्तिष्क में भी नहीं होती, क्योंकि हम यह भली भाँति जानते हैं कि यदि इलैक्ट्रानिक मस्तिष्क में कोई

परिवर्त्तन होगा तो तभी होगा जब मनुष्य उसमें कुछ करेगा। परन्तु मनुष्य स्वयं अपने-आपको क्या करेगा, यह वह सचमुच नहीं जानता। काल का एक विशेष नपैना और नितान्त अग्राह्य और दुर्बोध परिवर्तन नाम की वस्तु मनुष्य के अन्दर टक-टक कर रही है। यही वे शक्तियाँ और सम्भावनाएँ हैं और उसी प्रकार भीतर बैठी हैं जैसे एक बीज में छुपा हुआ विशाल वृक्ष या लाल-लाल और भयावह विनाश। जिस किसी दृष्टिकोण से भी देखिये यह प्रभाव-शाली है, और चूहे में भी यही सब कुछ है। या फिर वे पक्षी, मैं उन पक्षियों को कभी नहीं भूल सकता—लेकिन फिर भी जब मैंने उनके महत्त्व को आँका था उस समय सबसे पहले मैंने समय-सम्बन्धी पाठ सीखा था। मैं तब युवक था और एक विशाल रेगिस्तान में अकेला रह गया था। हम सब, एक खोज-सम्बन्धी अभियान पर थे जिसके सदस्यों को अधिक प्रभावशाली ढङ्ग से खोज करने के निमित्त चारों ओर कई सौ मील के क्षेत्र में फैला दिया गया था। वहाँ मैंने सीखा कि समय कई ऐसे धरातलों का क्रम है जो एक ही ब्रह्माण्ड में छिछले ढङ्ग से वर्तमान है, गति मनुष्य का भ्रम है, एक काल्पनिक घड़ी है, जो हमारी ही किस्म के प्रोटोप्लाज्म में चल रही है।

ज्यों-ज्यों लम्बे महीने बीतने लगे, मैंने ऐसे धरातल पर रहना शुरू किया जहाँ जीवन की गति मन्द पड़ जाये और अधिक तत्परता से उन चीजों पर गौर करना आरम्भ कर दिया, जो वहाँ जीवन को प्रभावित करती थीं। मैं मटरगश्ती करता, ग्रीष्म की चिलचिलाती गर्मी में, सँकरी घाटी के ऊपर-नीचे मन्द-से-मन्द गति से आया-जाया करता। मैं उन विशाल भूरे पत्थरों के पीछे घण्टों खोया रहता जो उस बीहड़ प्रदेश के समतल भागों में एक-दूसरे के ऊपर तिरछे पड़े रहते थे। मैं मानव-जगत् को भुल चुका था और उनका जगत् मुझे भूल चुका था। यदा-कदा उन सँकरी घाटियों में मुझे एक खोपड़ी पड़ी मिल जाती और उससे मेरा वहाँ रहना न्यायोचित सिद्ध हो जाता था। मैंने इन खोजों में गम्भीरता से गहरी दिलचस्पी ली थी। मैं, वहाँ अपने पहले के प्रकृतिविज्ञों की तरह, जीवन को एक सतर्क और शान्त दृष्टिकोण से देखने आया था और खुदाई में प्राप्त नंगी हड्डियों में दिलचस्पी लेना सीख गया था।

एक बार मैं, एक ऊँचे टीले पर बैठा हुआ था। यह टीला मेरे सामने की ओर, नीचे, रेत के उजाड़ ढेरों में फैला हुआ था। मैं तीसरे पहर भर वहाँ बैठा रहा। बैठे-बैठे अन्त में जब मैंने अपने जूतों की ओर नजर डाली तो मुझे जमीन पर एक अस्पष्ट-सी आकृति दिखाई पड़ी। वह एक बड़ा सा ज़हरीला साँप रैटल स्नेक (एक ज़हरीला साँप जिसकी दुम की बनावट ऐसी होती है कि उसकी मदद से खड़खड़ाहट जैसी आवाज कर सकता है) था और पता नहीं

कब से मेरे साथ बैठा हुआ था। मुझे देखकर वह डरा नहीं था। हम दोनों पुरातन काल की नींद में चलने वाले युग की गति से बँधे थे, एक ही ऊँचाई की हवा और धूप में तप रहे थे। जब मैं आया था तो वह संभवतः वहाँ पहले से मौजूद था। जब मैं उस स्थान से रवाना हुआ वह तब भी सोया हुआ था। उसकी गेंडुल जिसे मैं मुश्किल से पहचान पाया था, एक बार फिर उन पत्थरों और बजरी में अदृश्य हो गयी, जिसके बीच मैं उस सर्प की उपस्थिति को कठिनाई से जान पाया था।

दूसरी बार, मैं एक और ऊँची पहाड़ी पर, हवा के थपेड़ों से मुड़े-तुड़े कुछ सख्त चीड़-वृक्षों के बीच पहुँचा। रेत से आधे ढके ये छोटे पेड़ एक थाले के आकार के ऐसे गड्ढे में उगे हुए थे, जिसमें हवा के वेग से उड़ने वाली सभी वस्तुएँ आ-आकर अटक जाती थीं। वहाँ पर कुछ पक्षियों की पतली हड्डियाँ और किसी अज्ञात युग के टूटे-फूटे घोंघे थे और चीड़ वृक्षों की जड़ें ऐसी गाँठ-दार उँगलियाँ-सी लगती थीं मानो वे बरसों से कष्टपूर्वक चट्टान की दरारों को पकड़े रहने के कारण फूल कर बदशकल हो गई हों। मैं उन वृक्षों की हलकी छाया में लेट कर एक बार फिर सो गया।

अन्ततः ठण्ड बढ़ गई, क्योंकि तब तक शरद् ऋतु शुरू होने ही वाली थी, और इधर-उधर जो थोड़ी बहुत प्राणवान चीजें थीं वे समय की कहीं शीतमयी परत में कुम्हलाती जा रही थीं। नींद और जाग्रत अवस्था के बीच की स्थिति में मैंने अपने आसपास वे जड़ें देखीं और फिर धीरे-धीरे, जैसे उस एक कदम की दूरी में अनेकों शताब्दियाँ लग गयी हों, मैंने नींद से अकड़े अपने हाथों को उन जड़ों के परतदार छिलके पर फिराया और अपने ठिठुरे चेहरे को डूबते हुए सूर्य की ओर घुमाया। मैं गाँठों से भरी, दर्द करते हाथ-पैरों वाली कोई वस्तु था, जो वहाँ लम्बे समय से धैर्य और सहिष्णुता के कारण फँसी हुई थी, जिसे इस बात की आवश्यकता थी कि जीवित उँगलियों को चट्टानों के भीतर डालकर और फिर धीरे-धीरे कसक भरे फैलाव द्वारा उन चट्टानों को तोड़ कर टुकड़े-टुकड़े कर दे। मैं समझता हूँ कि उस समय मेरी नाड़ी की धड़कन इतनी सूक्ष्म और गति इतनी मन्द थी कि मैं वहीं रह कर और गहरे में, पाले की निचली सतह तक जा सकता था या उस स्फटिक जीवन तक पहुँच सकता था जो कंकरों में चमचमाहट भर देता है या हिम के गाले को चमकाता है या फिर विश्वों के बीच उल्काओं के लोहे में स्वप्न देखता है।

यह एक धुँधला अवरोहण था लेकिन इसमें समय वर्त्तमान था। समय की उस परत की किसी निचली सतह पर मुझे खयाल आया कि कोई दूसरी राह से भी तो आ सकता है। इस घटना के थोड़े ही महीनों बाद मैं अपने कुछ ऐसे सहयोगियों के साथ जा मिला जो काफी ऊँचाई पर स्थित एक हवा-

दार पठार की ओर जा रहे थे। यह पठार घास के बाहर पत्थरों की तरह निकली हुई, विशाल हड्डियों के लिए विख्यात था। मैं सरीसृपों के साथ बैठा ऊँघ चुका था और पेड़ों की शताब्दियों पुरानी नाड़ी की मन्द गति के साथ चल चुका था, और अब, सुस्त कदमों से, किसी तेजी से भागते समय की अदृश्य सीढ़ी द्वारा चढ़ रहा था। मेरे काम के सिलसिले में पक्षियों की चर्चा भी की जा रही थी। पक्षी अत्यन्त तीव्र गति से रहने वाले जीव होते हैं, यह कहा जा सकता है कि पक्षी वे सरीसृप हैं जो समय की गहरी नींद से निकल कर धूप से उज्ज्वल चरागाहों में नर्त्तन करने वाले, परीलोक के जीवों में परिवर्त्तित हो गये हैं। इसमें शक नहीं, कि यह, युवक-मन की एक कल्पना है लेकिन उस पहाड़ी की सीधी ढलानों पर एक ऐसी घटना हुई कि यह मेरा एक अविस्मरणीय अनुभव बन गया। तब से मैं किसी पक्षी को पिंजड़े में बन्दी देखना सहन नहीं कर सकता।

वसन्त की एक रात धुन्ध की लीक में से निकलते हुए, हम उस घाटी में पहुँचे। उस स्थान को देखकर लगता था कि मानो यहाँ किसी मनुष्य के चरण नहीं पड़े होंगे। लेकिन हमारे स्काउटों का अग्रगामी दल यहाँ पहले ही आ चुका था और हमें उस पत्थर की कोठरी के बारे में सब कुछ पता था जो ऊपर एक पहाड़ी की ढलान पर कब की परित्यक्त खड़ी थी। पिछली शताब्दी में जब जमीन हथियाने की नीयत से आने वालों का जोर था तब इस कोठरी का निर्माण किया गया था, लेकिन जब इस इलाके की बेकार भूमि में खेती नहीं की जा सकी तो इस कोठरी को त्याग दिया गया था।

इस प्रदेश में चारों तरफ इस तरह की जगहें हैं। और जहाँ-तहाँ अनगढ़ पत्थरों से चिह्नित कब्रें हैं। पुराने किस्म के कारतूसों के सड़ते-गलते खोल उन जगहों पर बिखरे पड़े हैं जहाँ किसी ने विशाल गोल पत्थरों के पीछे खड़े होकर कभी कोई मोर्चा लिया होगा। यह सब परती जमीन के क्षेत्रों पर अधिकार करने के लिए हुए युद्धों के अवशेष थे, अब वे लोग पत्थरों के नीचे दबे पड़े हैं। मैं चोटी के नीचे छाई हुई धुन्ध के बीच से निकलते हुए अपने खोजी-दल की लम्बी कतार देख सकता था—और देख सकता था उनकी मशालों को, हमारे इकट्ठा करने के डिब्बों से प्रतिबिम्बित होने वाली ट्रकों की रोशनी को, और दूर कहीं किसी ट्रक के पीछे बँधे ट्रेलर में किसी दैत्य-सरट के जाँघ की उछलती हुई हड्डी को। मैं कुछ क्षण एक चट्टान पर खड़ा हो नीचे की ओर देखते हुए सोचता रहा कि भूत-काल का पता लगाने के लिए उपकरणों और नकद रूप में कितना खर्च हो जाता होगा।

अन्य कार्यों के अलावा हम से यह भी कहा गया था कि हम वर्त्तमान काल की वस्तुओं को भी खोजें। आदेश भेजा गया था कि सरीसृप, पक्षी या जो

कुछ भी प्राप्त हो, उन्हें जीवित पकड़ा जाय । कहीं विदेश में किसी चिड़िया-घर को इन जानवरों की जरूरत थी । एक ऐसा आपसी मामला था जो विज्ञान के सिलसिले में करना पड़ता था । हो सकता है कि हमारे किसी संग्रहालय को शतुरमुर्ग के अंडों की जरूरत हो जिन्हें इन जीवों के बदले प्राप्त किया जा सकता हो । जो भी हो, मेरा काम कुछ पक्षी पकड़ना था और इसीलिए मैं ट्रकों के आने के पूर्व ही वहाँ पहुँच गया था ।

पत्थर की वह कोठरी वर्षों से खाली थी । हमारा इरादा, उस कोठरी को साफ करके वहीं रहने का था, लेकिन उसकी छत में कई छेद थे और उसके शहतीरों पर कुछ पक्षियों ने घोंसले बना कर रहना शुरू कर दिया था । एक ऐसी जगह में, जहाँ सब-कुछ तेज हवाओं के कारण उड़ कर नष्ट हो गया हो, वहाँ आप इस प्रकार की कोठरी पर निर्भर रह सकते हैं । पक्षियों तक को भी जलवायु की कठिनाइयों और जंगली कुत्तों (Coyotes) से बचने के लिए सुरक्षित स्थान की आवश्यकता होती है । किसी वन्य प्रदेश में, धीरे-धीरे नष्ट होती हुई कोठरी, पक्षियों को आकर्षित करती है । मैं कल्पना करता हूँ कि वे उस कोठरी के करीब आते होंगे, उसकी छत के आगे निकले हुए भाग में आकर कान लगा सुनते होंगे, और छत के तख्तों को अपनी चोंच से तब तक हौले-हौले ठोकते होंगे जब तक कि उन्हें रहने लायक कोई छेद न मिल जाय । उसके बाद अकस्मात् ही वह जगह उनकी हो गई और मनुष्य का अस्तित्व भुला दिया गया ।

बाद के वर्षों में, मैं कभी-कभी यह सोचता रहा हूँ कि अन्तिम मनुष्य के पहाड़ों पर भाग जाने के बाद, न्यूयार्क शहर पर अधिकार करते हुए पक्षियों का दृश्य संसार का सुन्दरतम दृश्य होगा । यह सच है कि इस सुन्दर दृश्य को देखने के लिए मैं जीवित नहीं रहूँगा लेकिन मैं जानता हूँ कि यह कैसा दिखाई देगा क्योंकि मैं ऊँचे क्षेत्रों में रह चुका हूँ और यह जानता हूँ, कि पक्षी हम पर किस तरह निगाह रखे हुए हैं । मैंने गौरैयाओं को प्रयोगात्मक ढंग से एअर-कण्डीशनरों पर ऐसे-ऐसे समय ठक-ठक करते सुना है जब उनके विचार से वहाँ कोई सुनने वाला नहीं था—और मैं यह भी जानता हूँ कि दूसरे पक्षी उन कम्पनों की भी जाँच करते हैं जो टेलीवीजन के एरियलों से उन तक पहुँचते हैं ।

"क्या वह चला गया ?" वे पूछते हैं और नीचे से कम्पनों की एक लहर ऊपर आती है, "अभी नहीं, अभी नहीं ।"

हाँ, तो हम फिर अपने किस्से पर आते हैं । मैंने धीरे से उस कोठरी का द्वार खोलना शुरू किया । वहाँ जो भी चिड़ियाँ थीं उनकी आँखों को चकाचौंध करने के लिए मेरे पास एक तेज बिजली की बत्ती थी ताकि वे छत से होकर भागने के लिए रास्ता न देख सकें । मेरे पास सामने की दीवार पर लगाने के

लिए एक छोटी-सी सीढ़ी थी, उस दीवार पर एक टाँड-सी बनी हुई थी, जहाँ मुझे ज्यादा-से-ज्यादा पक्षी हाथ में आने की उम्मीद थी। किसी भी चतुर हत्यारे की तरह, मुझे भी सब आवश्यक सूचनाएँ प्राप्त थीं। मैंने धकेल कर द्वार खोला, थोड़ी चरमराने की आवाज हुई। एक या दो पक्षियों में कुछ हलचल-सी हुई जो मुझे साफ सुनाई दी, पर कोई उड़कर भागा नहीं। छत के छेदों से, तारा-मण्डल की हलकी-हलकी रोशनी छनकर भीतर आ रही थी।

मैंने आहिस्ता-आहिस्ता कदम रख, फर्श को पार किया, सीढ़ी खड़ी की और बिजली की बत्ती को तैयार रख हौले-हौले इस तरह ऊपर चढ़ा कि मेरे हाथ और सिर दीवार के उस टाँड के ऊपर आ गए। छत के बाहर निकले भाग में उस टाँड के पीछे, तारों की हलकी रोशनी के अलावा बाकी सभी जगह घोर अन्धकार छाया हुआ था। रोशनी से उनको चकाचौंध कर देने पर वे रास्ता नहीं देख पायेंगे। अब वे मेरे कब्जे में थे। मैंने सावधानी से अपना हाथ उनके ऊपर बढ़ाया ताकि वहाँ जो कुछ भी हो, उसे पकड़ने के लिए तैयार रहा जाय, फिर मैंने बिजली की टार्च को उस टाँड के किनारे पर अटका दिया ताकि जलाने पर वह वहीं पर स्थिर रहे और इस तरह मुझे दोनों हाथ काम में लाने का मौका मिल जाये।

सिर्फ एक चीज़ को छोड़ कर बाकी सब कुछ ठीक-ठीक चलता रहा—मुझे यह मालूम नहीं था कि उस जगह पर किस प्रकार के पक्षी हैं। मैंने इस पर कोई विचार नहीं किया था और अगर किया भी होता तो उससे कोई लाभ नहीं था। मुझे आदेश दिया गया था कि मैं कोई दिलचस्प चीज़ पकड़ूँ। मैंने फुर्ती से टार्च लाइट जलाई, पंखों के उड़ने-फड़कने का शोरगुल होने लगा था, लेकिन मेरे उन्हें पकड़ने के बजाय उन्होंने या यह कहना चाहिए कि उसने मुझे, मेरे हाथ को पकड़ लिया। वह एक छोटे किस्म का उकाब था और मेरी मुट्ठी के बराबर उस छोटे उकाब के हिसाब से, जो कुछ वह कर रहा था, ठीक ही था। जब रोशनी बली और मेरा हाथ उसके बगल के पक्षी की ओर लपका तो उसने एक जोर का कर्कश चीत्कार किया और अपने पंजों से मेरे हाथ पर आक्रमण कर दिया, उसकी चोंच मेरे अँगूठे में घुस गई। इस घपले में बिजली की टार्च को धक्का लगने से वह अपने स्थान से हिल गयी और उसके जोड़ीदार की आँखों से ज्योंही चकाचौंध हटी, वह छत के छेद से होकर सफाई के साथ तेज़ी से बाहर निकल, तारों के बीच मँडराने लगा। यह सब कुछ सिर्फ पन्द्रह सैकण्ड में हो गया, आप सोच सकते हैं कि इस बीच, मैं, सीढ़ी से नीचे गिर पड़ा होऊँगा, लेकिन नहीं, इस तरह के मामले में मुझे एक पेशेवर हत्यारे की तरह डटे रहने की ख्याति प्राप्त थी। और उस पक्षी ने यह सोचने की गलती की थी कि मेरे हाथ उसके दुश्मन हैं, उनके पीछे उन पर

दृष्टि रखने वाली आँखें नहीं। उसने काफी प्रभावशाली ढंग से मेरा अँगूठा चबा डाला था और अपने पंजों से मेरे हाथों को खरोंच डाला था, लेकिन अन्त में मैंने उसे पकड़ ही लिया, क्योंकि मेरे दोनों हाथ इस काम में लगे थे।

वह एक छोटी जाति का, अपने पूरे यौवन में पहुँचा हुआ, एक सुन्दर नर उकाब था। मुझे इस बात का दुःख था कि मैं उसके जोड़े को नहीं पकड़ पाया। लेकिन जब अपने खून-बहते हाथों से मैंने सावधानी से उसके पंखों को मोड़कर उसे पीठ से इस तरह पकड़ा कि वह दुबारा चोट न कर सके, तब, मैंने मन-ही-मन स्वीकार किया कि ऐसी परिस्थितियों में इस तरह के दो पक्षियों को सँभालना संभव नहीं था। उस छोटे से नर ने मेरा ध्यान बँटाकर मादा को बचा लिया था। वह इसी के लिए पैदा हुआ था और अब मेरे हाथों में घोर निराशा से बैठा हुआ किसी तरह की कोई आवाज तो नहीं कर रहा था, लेकिन बत्ती के पीछे छाया में मेरी ओर ज्वालामय नेत्रों से लगभग उपेक्षा के साथ देख रहा था। उसने मुझ पर दया नहीं की और मुझसे दया की उम्मीद नहीं की। मुझे ऐसा लगा कि उसके और मेरे बीच कोई ऐसी चीज़ गुजरी जिससे मेरे मन में एक हलकी उलझन और आकुलता-सी होने लगी।

मैंने उसकी आँखों से निगाह हटा ली और अपनी मुट्ठी में पकड़े हुए शिकार को लेकर किसी तरह अपना विशाल अस्थिपंजर सीढ़ी से नीचे उतारा। फिर उस पक्षी को एक छोटे से डिब्बे में बन्द किया ताकि बाहर निकलने की कोशिश में वह खुद को घायल न कर दे। उसके बाद आने वाले ट्रकों का स्वागत करने के लिए, कोठरी से बाहर निकल आया। वह एक लम्बा दिन था, और मैदान अँधेरे में अभी ठीक-ठीक नहीं पहचाना जा सकता था। सवेरे यह पक्षी भी अन्य कहानियों की तरह एक और किस्सा हो जायेगा। हड्डियों से लदे ट्रक के अन्दर एक छोटे पिंजरे में बन्द किसी एक शहर को चला जायेगा जहाँ उसके जीवन के बाकी दिन बीतेंगे और यह अच्छी ही बात होगी। मैंने अपने दर्द करते हुए अँगूठे को चूसा और कुछ खून के साथ थूका। एक हत्यारे को इस सब की आदत डालनी होती है और मुझे तो अपनी व्यावसायिक ख्याति भी बनाये रखनी थी।

दूसरे दिन सवेरे, इस प्रदेश में एकाएक होने वाले परिवर्त्तन के साथ, घाटी में छाई हुई धुन्ध गायब हो चुकी भी। आकाश गहरा नीला हो गया था और मीलों दूर तक जमीन के बाहर उभरे हुए पत्थर दिखाई दे रहे थे। मैं सवेरे जल्दी उठा और बक्से में बन्द उकाब को उस जगह पर लाया जहाँ मैं एक पिंजरा बना रहा था। पर्वतीय जलधारा के सदृश शीतल बयार घास के ऊपर होकर बहती आई और मेरे बालों को अस्त-व्यस्त कर गई। जीवन की कामना

करने वाले प्राणियों के लिए यह कितना सुन्दर दिन था। मैंने, ऊपर-नीचे, आगे-पीछे दृष्टि डाली और कोठरी की छत के उस छेद को देखा, जहाँ से होकर दूसरा उकाब भागा था। जहाँ-जहाँ मेरी दृष्टि जा सकती थी, वहाँ कहीं भी उस भागे हुए उकाब का कोई चिह्न नहीं दिखाई देता था।

"अब तक शायद दूसरी काउण्टी में चला गया होगा", मैंने दीवानों की तरह सोचा और काम शुरू करने के पहले, एक नज़र पिछली रात के कैदी को देखने का फैसला किया।

चोरों की तरह मैंने मैदान के चारों ओर तथा ऊपर-नीचे देखा और उस डिब्बे को खोला। उसके पंख सही ढंग से समेट कर, हाथ से पकड़, सीधे बाहर निकाला और इस बात की सावधानी बरती कि कहीं वह चौंके नहीं। वह मेरी हाथ की पकड़ में चुपचाप मुर्दा-सा पड़ा रहा, पंखों के नीचे उसके धड़कते हृदय का स्पन्दन मेरे हाथों को महसूस हो रहा था। उसने केवल एक बार देखा, मुझसे परे ऊपर की ओर।

उसकी वह अन्तिम दृष्टि ऐसे पूर्ण प्रकाशित आकाश की ओर गई जिसकी चकाचौंध में, मैं कुछ भी नहीं देख सका। वह मन्द बयार एक बार फिर बही और पास ही पहाड़ी पौधे के नन्हें पत्तों को झकझोरती हुई निकल गई। मैं समझता हूँ कि उस समय जो कुछ मैं करने वाला था उसका विचार मेरे मन में पहले से ही था, लेकिन मैंने उसे चेतन मन में प्रकट नहीं होने दिया। मैंने केवल अपना हाथ बढ़ाया और उस उकाब को घास के ऊपर रख दिया।

वह एक दीर्घ मिनट तक निराश भाव से अस्थिर बैठा रहा, उसकी आँखें अभी भी अनन्त नीले आकाश की ओर टकटकी बाँधे थीं। ऐसा लगता था कि वह अपने मन में, छूटने की आशा इस सीमा तक छोड़ चुका था कि उसे मेरे हाथों से मुक्त होने का अनुभव ही नहीं हुआ। और तो और वह अपने पैरों पर भी खड़ा नहीं हुआ, केवलमात्र छाती के बल, घास पर पड़ा रहा।

उस दीर्घ मिनट के अगले क्षण, वह एकाएक गायब हो गया। मेरी निगाहें भरपूर उसी पर टिकी होने पर भी वह बिजली की चमक की तरह उन निगाहों से ओझल हो गया। यहाँ तक कि मैं उसके पंखों के फड़कने की, पूर्वानुभूति की भी झलक न ले पाया। वह सीधे, प्रकाश की अनन्त ऊँचाइयों तक फैली शून्यता में, उस स्फटिक-निर्मल आकाश में जा पहुँचा था जहाँ मेरी दृष्टि कठिनाई से पहुँच सकती थी। पर्याप्त लम्बे समय तक सन्नाटा छाया रहा, प्रकाश इतना तीव्र था कि मैं उसे देख नहीं सकता था। और तब दूर कहीं ऊँचाइयों से एक गूँजती हुई तीव्र ध्वनि नीचे की ओर आती हुई सुनाई पड़ी।

उन दिनों मैं नौजवान था और मैंने बहुत थोड़ी दुनिया देखी थी लेकिन जब मैंने वह चिल्लाहट सुनी तो मेरा दिल थम गया, यह उस कैदी उकाब की

आवाज नहीं थी क्योंकि उस समय, सूर्य की दिशा से अपनी आँख हटा लेने की वजह से, अब मैं काफी दूर तक देख सकता था। न मालूम कितने घण्टों से आकाश के अनवरत चक्कर काटती हुई उसकी विरह-व्याकुल मादा, जैसे सीधे सूरज की आँखों से होती हुई अपने जोड़े से मिलने तीव्र गति से उड़ती आ रही थी। और फिर कहीं बहुत ऊपर से हमारे चारों ओर पर्वतों की चोटी-चोटी को गुँजाती हुई, एक अकथनीय रोमांचित आनन्द से भरपूर ऐसी आवाज आई जो वर्षों के व्यवधान को पार कर, मेरे नाश्ते की शान्त मेज़ के प्यालों को तरंगित करती हुई आज भी सुनाई देती है।

अब मैंने उन दोनों को साथ-साथ देखा। वह अपनी मादा से मिलने के लिए तेजी से ऊपर की ओर जा रहा था। अत्यन्त ऊँचाई पर आकाश के बीच, एक ऐसे विशाल स्थिर चक्र के मध्य उनका मिलन हुआ जो शीघ्र ही चक्कर खाते वृत्तों और पंखों के एक नृत्य में परिणत हो गया। एक बार, केवल एक बार फिर उन दोनों के स्वर आपसी प्रश्नोत्तरों के कर्कश वन्य संगीत में मिल कर, पर्वत-शिखरों से टकराये और सम्पूर्ण घाटी में फैल गये। उसके बाद वे दोनों सदा के लिए चल दिये, मनुष्यों की दृष्टि से दूर कहीं ऊपरी क्षेत्रों में।

अब मेरी वह उम्र नहीं रही, मेरी नींद भी कम हो गई है और जो देखने को है उसका बहुत देख चुका हूँ, और सोचता हूँ कि अब मैं किसी भी वस्तु से कुछ विशेष प्रभावित भी नहीं होता। मेरे समाचारपत्र की प्रातःकालीन शीर्ष पंक्ति में लिखा है, "मशीनों की अगली खासियतें क्या होंगी? हो सकता है अपनी ही जैसी मशीनें पैदा कर सकने की शक्ति हो।"

मैं समाचारपत्र नीचे रख देता हूँ और उसका यह वाक्य चुपचाप मेरे मस्तिष्क में घुस आता है, "ऐसा नहीं जान पड़ता कि मनुष्य की बनावट, उसके शरीर-निर्माण करने वाले तत्त्वों, या उसके व्यवहार में कोई ऐसी बात है जिसका प्रतिरूप विज्ञान द्वारा न बनाया जा सकता हो जिसके विभिन्न तत्त्वों के यौगिक तैयार न किये जा सकते हों, बल्कि इसके विपरीत...... ।"

शहर भर में चारों ओर चमकीली मशीनों के नुकीले दाँतदार पहिये, घूमने लगे हैं। गणना करने वाली मशीनों में अंक घूम रहे हैं, नामों के अक्षरों का उच्चारण हो रहा है, कोई एक विचारशील मशीन हजारों की कतार में सजे हुए उँगलियों के निशानों में से वास्तविक अपराधी के निशान छाँट लेती है। प्रयोगशाला के अन्दर एक इलैक्ट्रानिक चूहा, भुलभुलैया से होकर तेज़ी से दौड़ता हुआ उस पनीर की ओर भागता है जिसे न तो चख सकता है, न खा सकता है और दुबारा दौड़ने पर वह एक जीवित चूहे से अधिक कुशलता दिखाता है।

"इसके विपरीत......" मेरा मस्तिष्क उस वाक्य को आगे बढ़ाता है, इसके विपरीत मशीन से रक्त नहीं बहता, उसे दर्द नहीं होता, वह घण्टों

शून्य आकाश में आकुल आशा से तड़पती हुई यह जानने की प्रतीक्षा नहीं करती कि दूसरी मशीन का क्या हुआ, न वह खुशी से चीखती है और न एक पक्षी के सबल आवेग के साथ वायुमण्डल में नृत्य ही करती है। दूर कहीं शून्य के विस्तार से भी अधिक दूरी से, स्वर्ग के बीचों-बीच से आने वाली वह आवाज मेरे नाश्ते की तश्तरियों के बीच हलकी गुंजार करती, गुजरती हुई, दूर कहीं चली जाती है।

५. जीवन का रहस्य

अब मैं प्रौढ़ अवस्था में पहुँच चुका हूँ फिर भी शरद् ऋतु के आने पर मैं हमेशा आशा से भर कर जीवन के रहस्य की खोज करता हूँ। किसी दिन जब पत्तियाँ लाल हो उठती हैं या गिर जाती हैं और ठीक उस समय जब पक्षी कहीं चले जाते हैं तब मैं एक पुराना कोट और टोपी पहन, अपनी पत्नी के विरोध के बावजूद कि कहीं मुझे ठण्ड न लग जाय, अपनी खोज पर रवाना हो जाता हूँ। मैं अपने कमरे से नीचे जाने की सीढ़ियों पर सावधानी से उतरता हूँ और दीवारों को फाँदने के बजाय चढ़ कर पार करता हूँ। कुछ दूर चलने के बाद, मैं एक मैदान में पहुँचता हूँ जिसकी कोई देखभाल नहीं होती। यह मैदान भूरे डण्ठलों और बीजों की खाली फलियों से भरा पड़ा रहता है।

मैदान को पार कर, जब मैं जंगल में पहुँचता हूँ तो कपड़ों के साथ लगे हुए कई तरह के बीज भी साथ-साथ चल रहे होते हैं, कोई हुकों के जरिये मेरे कोट में अटका है, कोई मेरी जुराबों में घुसा हुआ है, तो कोई कुशलता के साथ मेरे जूते के फीते में चिपका हुआ है। मैं उन्हें अपने साथ, यों ही चलने देता हूँ। आखिर ऐसी कुशलता के विरुद्ध बोलने वाला मैं कौन होता हूँ? स्पष्ट है कि प्रकृति, या प्रकृति के किसी अंश का इरादा इस मैदान से बाहर जाने का है और उसने मेरे साथ यात्रा करने की योजना बनाई है।

हम, यानी मैं और मेरे कपड़ों में चिपके हुए बीज, एक दूसरी दीवार पर चढ़ते हैं और आराम करने के लिए बैठ जाते हैं। इसी दौरान, मैं जीवन का रहस्य खोजने के सर्वोत्तम उपाय पर विचार करता हूँ। सभी बीज एकदम चुपचाप

रहते हैं और उनमें से कुछ सरक कर पत्थर की दरारों में घुस जाते हैं। पास ही चट्टान के उठे भाग से होकर एक बालदार सूँडी (Caterpillar) तेजी से निकल कर जा रही है, किसी बड़े परिवर्त्तन की ओर, यद्यपि देर से। लेकिन उस परिवर्तन के बारे में वह उतना ही जानती है जितना मैं।

यह शुभ आरम्भ नहीं क्योंकि जीवित वस्तुएँ यह रहस्य नहीं जानती हैं, पर ऐसे लोग भी हैं जो वर्ष के अन्त में परित्यक्त भूसे के बीच आकर इस रहस्य को खोजने की बुद्धिमत्ता पर सन्देह करेंगे। वे कह सकते हैं कि इसके लिए उपयुक्त समय वसन्त का है जब जलचूहों से सलाह-मशविरे किये जा सकते हैं या पत्थरों के नीचे विविध प्रकार के कीड़ों की गुंजार सुनी जा सकती है। लेकिन हाल के वर्षों में मुझे ऐसा लगने लगा है कि इस रहस्य को उन कोरे हुए जटिल बीजों की मंजूषाओं में भी सुलझाया जा सकता है जिनमें जीवन नहीं रहा जैसे कि स्वयं बीज में।

शरद् ऋतु में अनेक तरह की गतिविधियों और हरी पत्तियों के कारण उलझन नहीं होती। इन दिनों वे आन्तरिक उपकरण, वे हुक, वे सुइयाँ, वे डण्ठल, ये चिपकने वाले प्याले, वे पतली नलियाँ और रंग-बिरंगे थैले सबके सब जैसे किसी विशाल चीर-फाड़ के अन्तर्गत खुले पड़े होते हैं। ये सब आवश्यक वस्तुएँ हैं। केवल इसलिए धोखा न खाइये कि उनमें जीवन नहीं रहा। समय आने पर वह लौटेगा, लेकिन इस बीच आपके पास एक ऐसा दुर्लभ अवसर है जिसमें आप, तरह-तरह के रसों और पत्तियों के उलझाव के बिना जीवन के आकारों के अत्यन्त स्पष्ट, सुन्दर कोणों का अध्ययन कर सकते हैं। चूँकि मेरी उम्र बढ़ती जाती और मैं अपनी शक्ति को सुरक्षित रखता हूँ इसलिए मैं इस मौसम में इस समस्या पर अन्तिम और एकाग्र चित्त से विचार करूँगा। मैं किसी मुर्दा टिड्डे की, टूटी टाँग की आरी पर चकित होता हुआ पाया जाऊँगा या सड़ते हुए भूरे डण्ठलों के विशाल जंगल के बीच, मुदित खड़ा देखा जाऊँगा। हो सकता है कि जीवन के इन परित्यक्त उपकरणों में ही कहीं इस रहस्य की कुंजी छुपी हो। मैं परिश्रम की कमी के कारण या ऊँचे झरोखों में बैठे लोगों की उपहासास्पद मुस्कान के कारण इसे हाथ से नहीं जाने दूँगा। मुझे इसका पूरा भरोसा है कि जीवन वह नहीं जो इसका उद्देश्य बताया जाता है, स्काटलैंड के एक धर्मोपदेशक के विवेकपूर्ण शब्दों में प्रकृति "उतनी प्रकृति नहीं है, जितनी कि दिखाई देती है।" मैंने यह बात, शहर के बाहर बसे इस मैदान में, इससे कहीं अधिक वीरान प्रदेशों में, इससे कहीं कम आश्चर्यजनक खोजों में जीवन के अनेक वर्ष बिताने के बाद, अब सीखी है।

यह धारणा कि पुराने कपड़ों के बण्डल से अनायास ही चूहा पैदा किया जा सकता है, इतनी अधिक मजेदार और अजीबोगरीब है कि इसी कारण यह

समझना आसान है कि लोग इस धारणा को छोड़ना क्यों पसन्द नहीं करते थे। इस प्रकार की घटनाओं को किसी अव्यवस्थित ब्रह्माण्ड में स्वीकार किया जा सकता था, वह भी यह निर्णय करने का प्रयत्न किये बिना कि बक्सुओं में किस परिवर्त्तन से हड्डियाँ बनीं या जूते के बटन किस तरह आँखों में बदल गये। तब जीवन एक प्रकार का आश्चर्यजनक जादू समझा जा सकता था और जब वह अपनी छोटी चमकीली आँखें लिये हुए हिलता-डुलता पिछले कमरे में धोबीखाने में प्रकट हो जाता तो इस बात पर प्रकट रूप में आँखें झपकाने की भी जरूरत नहीं होती थी।

मनुष्यों ने गम्भीरता से जीव-कोशों का विश्लेषण और शल्य-क्रिया केवल तभी आरम्भ की जब आधुनिक प्राणि-विज्ञान का जन्म हुआ और यह पता चला कि जीवन के पद-चिह्न पीछे की ओर, उस आदियुगीन पंक में ले जाते हैं जहाँ अत्यन्त सूक्ष्म रूप में उसका आरम्भ हुआ था। डार्विन ने अपनी असावधानी के किसी क्षण में, बड़ी आशा से, इस सम्भावना की चर्चा की है कि जीवन 'छोटे गर्म तालाब' में अकार्बनिक या अजैव पदार्थों से उत्पन्न हुआ था। तब से आज तक, प्राणि-वैज्ञानिकों ने अजैव पदार्थों से जीवन-रचना के असफल प्रयत्न में हठीले प्रोटोप्लाज़्म को उँडेला है, उसका विश्लेषण किया है, मलीदा बनाया है और उसके कण-कण अलग किये हैं। यह अनिवार्य-सा प्रतीत होता था कि यदि हम जीवन के सरल रूपों की ओर चलते चलें तो अन्ततः हम एक ऐसे स्थान पर पहुँच जायेंगे जहाँ उपयुक्त रासायनिक स्थिति में उस रहस्यमय सीमा-रेखा को पार किया जा सकता है जो जड़ और चेतन पदार्थों के बीच वर्तमान है। यह बात बिल्कुल स्पष्ट दिखाई देती थी कि जीवन-पदार्थों का ही एक रूप है। कभी, कहीं, किसी समय कार्बन के रहस्यमय रसायन से बोलने वाले जन्तु की ओर दीर्घ प्रयाण आरम्भ हुआ था।

सौ वर्ष पूर्व लोग बड़ी आशा से, इस रहस्य के सुलझने की चर्चा किया करते थे, या कम-से-कम यह सोचते थे कि उनकी अगली पीढ़ी ऐसा कर सकेगी। समय-समय पर ऐसे दावे किये जाते थे कि जड़ पदार्थ से जीवन पैदा होता देखा गया है—परन्तु ऐसे सभी मामलों में यह सिद्ध हुआ कि देखने वाला आत्म-प्रवंचना में फँसा हुआ था। यह स्पष्ट हो गया कि जीवन का रहस्य कभी-कभी किये जाने वाले कुछ प्रयोगों द्वारा नहीं प्राप्त किया जा सकता है और वर्त्तमान अध्ययन से ऐसा लगता है कि जीवन, केवल पहले से ही विद्यमान जीवन के माध्यम से पैदा होता है। फिर भी यदि किसी प्रकार के जीव-पदार्थ द्वैतवाद से और जीवन तथा जड़ पदार्थ की दुनिया के बीच का सम्बन्ध पूर्णतया और युक्तिहीन ढंग से तोड़ कर, विज्ञान को परेशानी में नहीं डालना था तो जीवन की उत्पत्ति के बारे में कोई-न-कोई स्पष्टीकरण देना ही था।

तिस पर भी अनेक वर्ष बीतते गये और बड़े-बड़े सूक्ष्मदर्शक यन्त्रों तथा शल्य-क्रिया के दुर्धर्ष साधनों के होते हुए भी जीवन का रहस्य उसकी जीवित जैली में बन्दी ही रहा। सच तो यह है कि आगे चल कर यह रहस्य और भी उलझ गया, क्योंकि इस प्रकार के अनथक प्रयत्नों से पता यह चला कि अब तक सरल समझा जाने वाला जीव अमीबा, एक स्वचालित, जटिल रासायनिक कारखाना है। इससे पहले यह समझा जाता था कि अमीबा एक सरल जीवित बिन्दु है और उसकी रासायनिक बनावट का पता चलते ही हम तुरन्त, जीवन विधि को चालू करने में समर्थ हो जायेंगे, लेकिन बाद में यह विचार सचाई के साथ एक बेहूदा मज़ाक साबित हुआ।

इतने सारे प्रयत्न असफल हो जाने के कारण, विज्ञान कुछ इस प्रकार के असमंजस में पड़ गया कि जीवन की उत्पत्ति के बारे में उसने जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया था, उन्हें वह स्वयं ही सिद्ध नहीं कर सका। पौराणिक बातों और चमत्कारों पर भरोसा रखने वाले, धर्मशास्त्रियों का उपहास करने के बाद, विज्ञान ने स्वयं अपने को एक अलग ही पुराण-गाथा रचने की स्थिति में पड़ा पाया। अर्थात् यह धारणा कि बहुत लम्बे समय प्रयत्न करने के बाद भी जिस वस्तु को आज घटित होता सिद्ध नहीं किया जा सका, वह वस्तुतः अतीत के बिलकुल प्रारम्भिक वर्षों में घटित हुआ था।

मैंने, 'पुराणगाथा' शब्द का जो प्रयोग किया है वह सम्भवतः कुछ कड़ा प्रतीत हो सकता है। परन्तु यह प्रायः देखने को मिलता है कि प्राणिविज्ञान की आरम्भिक पाठ्य-पुस्तकों के कारण सीधे-सादे सामान्य पाठक में एक छोटे से भभकते तालाब से या सागर के जीवनदायी-रसायन पात्र को लाँघ कर, फाँद कर या उनसे सरक कर निम्न प्राणी जगत् की ओर इतनी निश्चिन्तता और फुर्ती से पहुँच जाने की ऐसी प्रवृत्ति पायी जाती है जिससे यह सोचना सरल हो जाता है कि इस मामले में कोई रहस्य है ही नहीं, यदि है तो यों ही मामूली-सा।

प्रसिद्ध ब्रिटिश-वैज्ञानिक वुजर (Woodger) ने इस रुख की कड़ी आलोचना की। उन्होंने हाल में कहा था, "अस्थिर कार्बनिक या जैव यौगिक और क्लोरोफिल (पत्तों का हरा पदार्थ) कणिकाएँ (Corpuscles) आज प्राकृतिक अवस्था में न तो अपने-आप बने रहते हैं, इसलिए यह कहना आवश्यक है कि कभी इस प्रकार की परिस्थितियाँ थीं जिनमें ऐसा हुआ ही होगा, यद्यपि प्रकृति के बारे में हमारा जो ज्ञान है, उससे हमें इस प्रकार की बात मान लेने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं है···जिस पर आप विश्वास करना चाहते हैं, उस बात के बारे में यह जोर डालना कि वह सचमुच ही कभी हुई होगी, सीधा-सादा कट्टरपंथी मतवाद है।

यदि हम अलौकिक शक्तियों द्वारा सृष्टि-रचना के सिद्धान्तों की ओर ध्यान नहीं देना चाहते अथवा वैज्ञानिक दृष्टि से संदिग्ध द्वैतवाद सिद्धान्त का आश्रय लेकर व्याख्या नहीं करना चाहते, तो पृथ्वी पर जीवन की विद्यमानता के सम्बन्ध में केवल दो सम्भावित स्पष्टीकरणों की ओर अनिवार्य रूप से ध्यान देना होगा। इनमें से एक, पूरी तौर पर असत्य सिद्ध न करने पर भी अब निश्चय ही चालू मत नहीं रहा है और इसे स्वीकार करने में जो बाधाएँ हैं वे इसके प्रतिपादन के समय से अब कहीं ज्यादा हैं। मेरा तात्पर्य लार्ड कैल्विन (Kelvin) और अर्रेनियस (Arrhenius) के सुझाव से है कि जीवन इस ग्रह में उत्पन्न नहीं हुआ, बल्कि अन्तरिक्ष की गहराइयों से यहाँ लाया गया। इस सम्बन्ध में यह युक्ति दी गयी कि आँखों से दिखाई न देने वाले सूक्ष्म बीजाणुओं में अत्यधिक शीत सहन करने की शक्ति होती है और वे हमारी पृथ्वी के वायुमण्डल में उल्काओं की धूलि के साथ या पृथ्वी की कक्षा के बीच प्रकाश-दबाव के कारण आ गये होंगे। इस विचार के अनुसार जब बीज एक बार ऐसी जमीन में 'बो' दिया गया जो उसके विकास के बहुत उपयुक्त थी तो उसके बाद फैलना, विकसित होना और परिस्थितियों के अनुकूल, व्यवस्थित होने की प्रक्रिया शुरू हुई और उच्च कोटि के जीवधारियों के बनने तक चालू रही।

एक उलझन में डालने वाली द्विविधा से बचने के लिए इस सिद्धान्त में विशेष आकर्षण है, लेकिन इसमें दोष यह है कि यदि यह सही सिद्ध भी हो जाय तो इससे कोई बात स्पष्ट नहीं होती। यह जीवन की प्रवृत्ति को स्पष्ट नहीं करती। यह केवल जीवन-सम्बन्धी उत्पत्ति की असुविधाजनक समस्या को दूर कहीं अन्तरिक्ष में या ऐसे विश्वों में पहुँचा देती है जहाँ हम कभी प्रवेश नहीं कर पायेंगे। चूँकि जीवन के निर्माण में उन्हीं रासायनिक यौगिकों का प्रयोग होता है जो पृथ्वी में पाये जाते हैं, इसलिए जब तक इसके विरुद्ध कोई अकाट्य प्रमाण नहीं मिलता तब तक यही स्वीकार करना अधिक उपयुक्त जान पड़ता है कि जीवन वस्तुतः इसी ग्रह पर उत्पन्न हुआ। आजकल व्यापक रूप से यह बात मानी जाती है कि अपनी वर्त्तमान स्थिति में समय की दृष्टि से सीमित समस्त ब्रह्माण्ड और अप्रच्छन्न सौर विकिरण की घातक प्रकृति, ये दोनों बातें इस तरह की रुकावटें हैं जिनसे इस बात की सम्भावना बहुत ही कम हो जाती है कि हमारी पृथ्वी पर जीवन शून्य के अनन्त विस्तार से होकर आया है। इसलिए हम अपनी उसी एक धारणा की जाँच करने के लिए विवश हैं कि जीवन जड़ पदार्थ का सहविस्तारी (Coterminous) नहीं है, बल्कि उसी से उद्भूत हुआ है।

प्रोटोजोआ वर्ग के एककोशीय जीव, जो सड़क के किनारे किसी भी

तलैय्या में भरे पड़े होते हैं, यदि जीवन के सरलतम रूप नहीं हैं, यदि ये जीव, जैसा कि हम जानते हैं, सूक्ष्म होने पर भी इन्होंने पहले से ही अपने-आपको परिस्थितियों के अनुकूल ढाल लिया है और वस्तुतः जटिल रचना के जीव हैं तो हम जीवन के ऐसे सरल रूप की खोज में कहाँ जायें जिसमें सबसे [illegible] कड़ी अर्थात् जीवित और मृत पदार्थ के बीच की कड़ी का संकेत मिल सके ? यही वह समस्या है जो मुझे चरागाहों और झाड़-झंखाड़ के बीच निरुद्देश्य भटकाती रहती है । हालाँकि मैं जानता हूँ कि यह पुराने किस्म के प्रकृतिवादी का रवैया है और प्रयोगशालाओं में लगातार काम करने वालों को, पतझड़ के झड़े पत्तों के बीच मेरा भटकना या पेड़ों की सड़ी छालों के बीच से पूछ-ताछ करना कतई पसन्द नहीं है । इसके अलावा अब इन लोगों में से [illegible] स्फटिकीय वाइरस को देख मुग्ध हो रहे हैं और इन्होंने अब इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप नाम का अद्भुत यन्त्र, इन अनजान आणविक जीवों की ओर घुमाया है, ये ऐसे जीव हैं जिन्हें मनुष्य पहले कभी नहीं देख पाता था । इनमें से कुछ लोग कोशीय जीव से निम्न स्तर की वस्तु की इस झलक से सन्तुष्ट हैं और वाइरस (Virus) को जड़ पदार्थ तथा जीवन के बीच के मार्ग का एक विश्राम-स्थल समझते हैं । सम्भव है यह सत्य हो परन्तु [illegible] और मकड़ी के बर्बाद जालों के बीच खिसकती हुई [illegible] धूप के बीच भटकते, एक उदास-उदास अनिश्चयात्मकता मेरे अन्दर घर कर चुकी है ।

मुझे यह सन्देह होने लगा है कि जीवन-सोपान पर नीचे की ओर यह दीर्घ अवरोहण शिक्षाप्रद और सुन्दर होते हुए भी मुझे उस अन्तिम रहस्य तक नहीं पहुँचायेगा । सच तो यह है कि मुझे अन्तिम [illegible] (brew) [illegible] रासायनिक पर विश्वास ही नहीं रहा । मैं जानता हूँ कि ऐसा कहना एक तरह से सिद्धान्त-विरुद्ध बात है और नीले फौलाद की माइक्रोटोम मशीनों और सफेदपोश वैज्ञानिकों के प्रति विश्वास पर जबरदस्त आघात है पर मेरे बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि मैं वैज्ञानिक प्रयत्नों के प्रति बुरी भावना प्रकट करूँगा, क्योंकि यदि सूक्ष्मवीक्षण और वह नीला फौलाद न होता तो मेरा अस्तित्व भी न होता । मैं सिर्फ इतनी-सी बात कहना चाहता हूँ कि इन कीड़ों और गुबरैलों के सूखे खोलों के, और टिड्डे की [illegible] टाँगों के बीच, कहीं पर मुझे ऐसी चीज दिखाई देती है जिसे अन्तिम वाइरस या स्फटिक या प्रोटीन कण तक पहुँचने की इस चीरफाड़ से बहुत स्पष्ट नहीं समझाया जा सकता । दूसरे शब्दों में, यदि जीवन का रहस्य इन्हीं वस्तुओं में निहित हो, तो भी मैं नहीं समझता कि जिस तरह का विश्लेषण करने में आजकल विज्ञान लगा है, उससे इसका पता चल जायेगा ।

थोड़ी देर के लिए कल्पना कीजिए कि आपने एक [illegible] के [illegible]

तलैय्या में भरे पड़े होते हैं, यदि जीवन के सरलतम रूप नहीं हैं, यदि ये जीव, जैसा कि हम जानते हैं, सूक्ष्म होने पर भी इन्होंने पहले से ही अपने-आपको परिस्थितियों के अनुकूल ढाल लिया है और वस्तुतः जटिल रचना के जीव हैं तो हम जीवन के ऐसे सरल रूप की खोज में कहाँ जायें जिससे सबसे बड़ी लुप्त कड़ी अर्थात् जीवित और मृत पदार्थ के बीच की कड़ी का संकेत मिल सके ? यही वह समस्या है जो मुझे चरागाहों, और झाड़-झंखाड़ के बीच निरर्थक भटकाती रहती है। हालाँकि मैं जानता हूँ कि यह पुराने किस्म के प्रकृतिविज्ञों का रवैया है और प्रयोगशालाओं में लगातार काम करने वालों को, पतझड़ के झड़े पत्तों के बीच मेरा भटकना या पेड़ों की सड़ती छालों के कीड़ों से पूछ-ताछ करना कतई पसन्द नहीं है। इसके अलावा अब इन लोगों में से बहुत से स्फटिकीय वाइरस को देख मुग्ध हो रहे हैं और उन्होंने वह इलैक्ट्रॉन-माइक्रोस्कोप नाम का अद्भुत यन्त्र, इन अनजान आणविक 'जीवों' की ओर घुमाया है, ये ऐसे जीव हैं जिन्हें मनुष्य पहले कभी नहीं देख पाया था। इनमें से कुछ लोग कोशीय जीव से निम्न स्तर की वस्तु की इस झलक से सन्तुष्ट हैं और वाइरस (Virus) को जड़ पदार्थ तथा जीवन के बीच के मार्ग का एक विश्राम-स्थल समझते हैं। सम्भव है यह सत्य हो परन्तु सड़ते-गलते डण्ठलों और मकड़ी के बर्बाद जालों के बीच रिसती हुई हलकी धुन्ध के बीच भटकते-भटकते, एक उदास-उदास अनिश्चयात्मकता मेरे अन्दर घर कर चुकी है।

मुझे यह सन्देह होने लगा है कि जीवन-सोपान पर नीचे की ओर यह दीर्घ अवरोहण शिक्षाप्रद और सुन्दर होते हुए भी संभवतः हमें अन्तिम रहस्य तक नहीं पहुँचायेगा। सच तो यह है कि मुझे अन्तिम किण्वन (brew) या रासायनिक पर विश्वास ही नहीं रहा। मैं जानता हूँ कि ऐसा कहना एक तरह से सिद्धान्त-विरुद्ध बात है और नीले फौलाद की माइक्रोटोम मशीनों और सफेदपोश वैज्ञानिकों के प्रति विश्वास पर जबरदस्त आघात है पर मेरे बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि मैं वैज्ञानिक प्रयत्नों के प्रति बुरी भावना प्रकट करूँगा, क्योंकि यदि सूक्ष्मवीक्षण और वह नीला फौलाद न होता तो मेरा अस्तित्व भी न होता। मैं सिर्फ इतनी-सी बात कहना चाहता हूँ कि इन बीजों और गुबरैलों के सूखे खोलों के, और टिड्डे की परित्यक्त टाँगों के बीच, कहीं पर मुझे ऐसी चीज दिखाई देती है जिसे अन्तिम वाइरस या स्फटिक या प्रोटीन-कण तक पहुँचने की इस चीरफाड़ से बहुत स्पष्ट नहीं समझाया जा सकता। दूसरे शब्दों में, यदि जीवन का रहस्य इन्हीं वस्तुओं में निहित हो, तो भी मैं नहीं समझता कि जिस तरह का विश्लेषण करने में हमारा विज्ञान समर्थ है, उससे इसका पता चल जायेगा।

थोड़ी देर के लिए कल्पना कीजिए कि आपने एक जादूगर के प्याले से

अभिमंत्रित जल पिया है। अब कभी न पलटी जा सकने वाली समय की धारा पलट दीजिये। इस सोपान-कूप से नीचे उतर जाइये, जिससे आपकी जाति ऊपर आई है। फिर अन्त में, काल-क्रम के निम्नतम धरातल पर पहुँच जाइये, परतदार शरीर और मछली के डैनों से, फिसलते हुए, सरकते हुए, और लौटते हुए उस कुपांस और पंक में पहुँच जाइए जिससे आपकी उत्पत्ति हुई। गुर्राहटों से, ध्वनिहीन फूत्कारों से होते हुए अन्तिम फर्न वृक्षों के नीचे से गुजरिये, चक्षुहीन और कर्णहीन, आरंभिक जल में उतर आइये, उस धूप का अनुभव कीजिये जिसे आप देख नहीं सकते, औरं उस जल में तैरते हुए अस्पष्ट स्वादों की ओर अपने सीखने वाले संस्पर्शक (tentacles) फैलाइये। आपके आकार-हीन परिवर्तनों में अभी आपका 'आप' तत्त्व शेष है; सरकते कण, रस और सभी रूपान्तर एक निश्चित लय में आकर्षक ढंग से काम कर रहे हैं, उनका, उद्देश्य आपको सुरक्षित रखने के अलावा और कुछ नहीं है—'आप' अर्थात् सत्ता, अर्थात् वह एककोशीय जीव, जिसके सत्त्व में अगम-अगोचर भविष्य निहित है, तब भी अपने जन्म के द्रवों से प्रत्येक मनुष्य ऊपर आ जाता है।

अब यदि किसी क्षण वह जादूगर आपके ऊपर झुककर चिल्लाये कि "हमें उस पथ के बारे में बताओ, बोलो!" तो आप कोई उत्तर नहीं दे सकेंगे। अनुभूतियाँ आपकी होते हुए भी शरीर का नियन्त्रण करने वाली शक्तियों पर आपका अधिकार नहीं है—और यही महान् रहस्यों में से एक रहस्य है। आप यह नहीं बता सकते कि जिस शरीर में आपका वास है, वह किस प्रकार काम करता है; या जिन अणुओं से इसकी रचना हुई है आप उनके घूमने पर, तेजी से इधर-उधर भागने पर नियन्त्रण नहीं रख सकते या उनका वर्णन नहीं कर सकते हैं, या फिर उन्होंने आप ही के शरीर की रूपरेखा में नाचना-घूमना क्यों पसन्द किया या फिर कल्प-कल्पान्तरों के लम्बे सोपान पर चढ़ते समय वे एक आकार से दूसरे आकार में नर्त्तन करते क्यों जाते हैं। यही वह समस्या है, यही वह कारण है जिसके वशीभूत अब जीवन के अन्तिम कण से मेरी दिलचस्पी खत्म हो गई है। आप अपनी इच्छा से इनकी खोज करते जाइये, तब तक उनका पीछा करते जाइये जब तक वे जीवन के कगार पर अनेक प्रतिरूपों में बदलते हुए अनाम-प्रोटीन-स्फटिक नहीं बन जाते। अपने मन की समस्त महान् शक्तियों का प्रयोग करते हुए तब तक पीछे की ओर जाइये जब तक कि आप विजेताओं के उदास-थके चेहरों के साथ हाइड्रोजन के उस बादल में न उतराने लगें जिससे सूर्य का जन्म हुआ था। और तब आप चीर-फाड़ की उस अन्तिम मंज़िल पर पहुँच जायेंगे जो इस विश्लेषण-युग की माँग है, लेकिन वह बादल उस रहस्य को अभी भी अपने दामन में छिपाये रहेगा; और यदि बादल ऐसा नहीं करेगा तो वह शून्यता उसे छुपाये रहेगी, जिसमें यह बादल प्रकट हुआ है,

समय पर बादल भी विलीन हो सकता है। सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि यह रहस्य रात्रि के गर्भ में निहित है।

पाले के बाद, सिर्फ इस मैदान के किनारों पर उस रहस्य की हल्की-सी फुसफुसाहट सुनाई देती है। एक बार, पतझड़ के दिनों में भी एक अविस्मरणीय संध्या में, मैंने एक काले साँप को पत्तियों के बीच धूप सेंकते हुए, मूर्तिमान पुरातन रात्रि के समन, ध्यान-मग्न देखा। रहस्य का नमूना बिना किसी जल्दबाज़ी के अपनी डरावनी चमकीली परतों को लिये हुए इस प्रकार रेंगता हुआ सरका कि मैं सहम गया और कुछ दूर ही से उसकी ओर प्रशंसात्मक दृष्टि से देख सका। परन्तु मैंने उसे खूब अच्छी तरह देखा और मुझे विश्वास है कि सर्वत्र व्यापक रहस्य के अपने हिस्से के साथ, वह मेरे पड़ोसी की दीवार के पत्थरों में घुस गया और वहाँ अपने चमकीले सिर के चारों ओर एक ही कुण्डली बाँधे, शीतकालीन रात्रि के अन्धकार में अनवरत सो रहा है। वह सरीसृपों के युग के एक ऐसे अजीब अन्धकार को सुरक्षित रखे हुए है जो केवल रात्रि या शून्यता नहीं है बल्कि जिसमें, जीवन की तरंगों के मंद-मंद चढ़ाव या गिराव में चूहे की हड्डियों या पक्षियों के अंडों के दृश्य दिखाई पड़ते हैं। इस साँप ने हमें विषय से भटका दिया है। हमारा विषय एक मैदान के सम्बन्ध में सूक्ष्म विवेचन था, रहस्यों की खोज के लिए की जाने वाली चीरफाड़, जो इस खोजी और कौतूहलपूर्ण युग की माँग है।

आजकल प्रायः प्रमुख पत्रिकाओं में हमें इस तरह के लेख दिखाई देते हैं जिनके शीर्षक इस प्रकार होते हैं, 'जीवन की चिन्गारी', 'जीवन का रहस्य', 'नये हारमोन : जीवन की कुंजी' या दूसरी इसी तरह की घोषणाएँ सुनने को मिलती हैं। उदाहरण के रूप में, कल ही की बात है, मैंने 'न्यूयार्क टाइम्स' में इस प्रकार की घोषणा का शीर्षक देखा 'वैज्ञानिकों द्वारा प्रयोगशाला में जीवन-रचना की भविष्यवाणी', मास्को से एक तारीख के साथ भेजे हुए समाचार में घोषणा की गयी थी कि विदुषी वैज्ञानिक ओल्गा लेपेशिन्सकाया ने भविष्यवाणी की है कि "जल्दी ही सोवियत वैज्ञानिक जीवन की रचना कर सकेंगे।" दुर्धर्ष प्रकृति की श्रीमती ओल्गा कहती हैं, "वह समय अब दूर नहीं है जब हम जीवन-सम्पन्न महत्त्वपूर्ण पदार्थ को बनावटी ढंग से तैयार कर सकेंगे।" उन्होंने इस बात को इतने जोरदार शब्दों में कहा कि इससे मुझमें करीब-करीब वैसी ही प्रतिक्रिया हुई जैसी कि परमाणु बम की सूचनाएँ सुनकर होती है। यह सच है कि मैं एक बार दौड़ कर दरवाजा बन्द करने को हो गया कि कहीं रूसी प्रोटोप्लाज़्म की आक्रामक लहर मुझे न धर दबोचे।

जिस चीज़ से मेरा विचलित विश्वास एक बार फिर लौटा, वह इस बात की याद थी कि इस प्रकार की घोषणाएँ तो लगभग एक शताब्दी से बराबर की

जा रही हैं । इस समय, रूसी वैज्ञानिकों में, इस प्रकार की विस्फोटक घोषणाएँ करने की प्रवृत्ति जागी है क्योंकि एक तो राजनीतिक दृष्टि से वे भौतिकवाद से पूरी तरह बँधे हुए हैं और उन लोगों में यह प्रवृत्ति पायी जाती है कि वे अपने देश में विज्ञान की प्रगति के बारे में शेखी बघारें । इसके अलावा, समाचार-पत्रों की खबर के अनुसार श्रीमती लेपेशिन्सकाया के कथन में एक अजीब-सी पुराने ढंग की महक थी । जिस प्रोटोप्लाज्म का उन्होंने जिक्र किया था वह आश्चर्यजनक रूप से, हीकेल (Haeckel) के पुराने और निरर्थक उर्सक्लीम (Urschleim) या आटोप्लैसन (Autoplasson) जैसा लगता है—यानी उस साधारण लिसलिसे पदार्थ जैसा—जिसे अब कोई भी महत्त्व नहीं दिया जाता । अमरीका में इस प्रकार की घोषणाओं का तरीका दूसरा होता है—इस संबंध में यह याद रखना चाहिए कि ऐसी बातें प्रायः, स्वयं वैज्ञानिकों की कही हुई नहीं होतीं, वे वैज्ञानिक अध्ययनों की पत्रकारों द्वारा की हुई व्याख्या होती हैं । उदाहरण के लिए किसी ने कोई विटामिन या इसी तरह का कोई ऐसा रासायनिक पदार्थ खोज निकाला है जिसके बिना जीवन फलता-फूलता नहीं है । यह बात जब तक सनसनीपूर्ण बातें छापने के अभ्यस्त समाचार-पत्रों तक पहुँचती हैं, हो सकता है तब तक यही पदार्थ 'जीवन का रहस्य' बन चुका हो । एक बात जिसे अनुभवहीन पाठक शायद न समझ सकें वह यह तथ्य है कि इनमें से कोई भी वस्तु, चाहे अभी हाल की खोजी हुई क्यों न हो, वास्तविक रहस्य नहीं होती । बल्कि वह एक बड़ी गूढ़ पहेली या रहस्य का छोटा, बेहद छोटा भाग हो सकता है, उस पहेली का, जो अभी भी लगभग उतनी ही जटिल है, जितनी सदा से थी । उत्प्रेरकों (Catalysts) हारमोनों, प्लाज़्मा-जीन्स या जीवन के कार्यकलापों में संलग्न दूसरे तरह-तरह के पदार्थों की बढ़ती हुई सूची से केवल इतना ही होता है कि इस गूढ़ रहस्य की जटिलता और अधिक लगने लगती है । जर्मन जीववैज्ञानिक वान बर्त्तालेन्फी (Van Bertalanffy) कहते हैं कि "एक सरलतम जीव-कोश के भौतिक-रासायनिक संगठन को ब्यौरेवार समझ सकना हमारी क्षमता से बहुत दूर की बात है ।"

आप, यह मत समझिये कि पिपेटों (काँच की द्रव-मापक नली), तरह-तरह की गन्धों और गैस की लपटों की भूलभुलैया में खुशी-खुशी खोये हुए, स्वसमर्पित वैज्ञानिकों के अनवरत और प्रशंसनीय धैर्य के प्रति अनादर-भावना के कारण मैं इस जंगल में भाग आया हूँ । यह तो एक ऐसे आदमी का एकाकीपन है, जो यह जानता है कि इस रहस्य के सुलझने तक वह जीवित नहीं रहेगा, और इसके अलावा जो इस बात पर विश्वास करने लगता है कि जब मानव द्वारा कृत्रिम तौर पर बनाये हुए पदार्थ का पहला कण—यदि कभी बन सके तो—किसी अज्ञात घोल में बढ़कर अपने आप अनेक कणों में विकसित होने लगेगा,

तब भी यह रहस्य सुलझ नहीं पायेगा ।

मैं समझता हूँ कि ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति अपने आप से पूछता है । सम्भवतः किसी दिन हम विश्वास के साथ यह कह सकेंगे कि "हम इस-इस प्रकार के प्रोटीन-कण से उत्पन्न हुए हैं जिसमें अपने-आप को इस तरह व्यवस्थित करने की शक्ति है जिससे, कुछ विशेष परिस्थितियों में उस जटिल वस्तु की रचना होती है जिसे जीव-कोश कहते हैं, और फिर इस जीव-कोश से कई चरण आगे चलने पर, बहुमुखी जीव-कोश रचना होने लगती है ।" मेरे कहने का अभिप्राय है कि हम यह सब कुछ पूर्ण विश्वास के साथ विस्तार से ब्यौरेवार कह सकेंगे लेकिन यह, मेरे हाथ में मौजूद टिड्डे की इस भूरी-काली और आरी-जैसे दाँतों वाली टाँग का जवाब नहीं है और न उन बीजों का जवाब है जो मजबूती से मेरे कोट के साथ चिपके हुए हैं । इसके अलावा यह मेरे मस्तिष्क की पतली तारों में गतिशील स्मृति का, प्रसन्नता और असम्भाव्य की कामना के सूक्ष्म सार का उत्तर भी नहीं है ।

मैं कल्पना करता हूँ कि मेरे अस्तित्व के पैंतालीस वर्षों में, मेरे शरीर के प्रत्येक अणु ने अपनी जगह बदली है या वह नाचते हुए, दूसरी वस्तुओं का अंश बनने के लिए दूर कहीं चला गया होगा । विभिन्न घासों से या जानवरों के शरीरों से, नये अणु कुछ समय के लिए मेरा भाग बनने के लिए आये होंगे, फिर भी इन सब चक्करों में, सूर्य की रश्मियों के बीच, छोटे-छोटे पतंगों के झुण्ड की तरह हलकी और विरल, मेरी स्मृति ज्यों-की-त्यों है, और बीस वर्ष पूर्व की एक आकर्षक आकृति अभी मेरे सामने है । वह आकर्षक आकृति और मेरे सभी बीते वर्ष किसी बेजान दानेदार फोटोग्राफ की तरह बीते समय को, सौन्दर्यहीन ढंग से फिर देखे जा सकने की यान्त्रिक व्यवस्था नहीं है । मेरी स्मृति बीते हुए समय को अपने-आप में थामे रहती है, इसके साथ ही वह यह भी जानती है कि जो बीत गया सो बीत गया और अब फिर लौटकर कभी नहीं आयेगा । यह अपने-आप में मृत चेहरों और खामोश आवाजों को और हाँ, खोये हुए बचपन की संध्याओं को, सँजोये रहती है । किसी विचित्र दिक्काल-रहित ढंग से इसमें वे मकान और कमरे अंकित हैं जो शहतीर-शहतीर, ईंट-ईंट अलग कर तोड़ दिये गये हैं । स्मृति-रूपी पतंगों के इस नर्त्तन में अङ्कित वस्तुएँ, वास्तविक जगत् की वस्तुओं से कहीं अधिक स्थायी हैं । यही कारण है कि विदुषी वैज्ञानिक ओल्गा लेपेशिन्सकाया ने उस प्रकार के प्रश्न का उत्तर नहीं दिया है जिसे कोई, एक खुले मैदान में पूछ सकता है ।

यदि कभी ऐसा दिन आ उपस्थित हो जब कि प्रयोगशाला का सरेसी-द्रव मनुष्य के निर्देशन में रेंगने लगे, तब उस दिन हमें दीनता की अत्यन्त आवश्यकता होगी । अपनी सफलता के घमंड में, हमारे लिए यह विश्वास

करना कठिन हो जायगा कि जीवन का रहस्य हमारी उँगलियों से निकल भागा है और अभी भी हमें भ्रमित किये हुए है। हम उन सब रासायनिक पदार्थों की, और उनकी रासायनिक प्रक्रियाओं की सूची बनायेंगे, कृत्रिम जीवन के निर्मातागण देवता बने हुए, समाचार-पत्रों के फोटोग्राफरों की फ्लैश-बत्तियों के प्रकाश में, सरलता की मूर्ति बने, फोटो खिचाने बैठेंगे, और इस बात पर विचार करने वाले कुछ ही लोग होंगे। एक युग के समय में ऐसी मानसिक वृत्ति गहराई से अपना स्थान बना लेती है कि जड़ और चेतन का सम्बन्ध खोजने की इच्छा ने कहीं हमें दोनों की अधिक महत्त्वपूर्ण विशिष्टताओं के प्रति अन्धा तो नहीं बना दिया।

जहाँ तक मेरा प्रश्न है, यदि मैं उस दिन तक जीवित रहा तो मेरा विचार, पुरानी टोपी पहन, सामान्य दिनों की भाँति ही दीवार को चढ़कर पार करने का है। मैं उस दिन भी वही अनजान यांत्रिक उपकरण पड़े देखूँगा जो आज यहाँ शरद् की वर्षा में पड़े हैं; ये विचित्र नलियाँ, जिनसे होकर जीवन-रस एक स्थान से दूसरे तक पहुँचता था, ये जटिल ढंग की बीज-मंजूषाएँ, जिनमें से जीवन निकल भागा है। मैं कोई भी हरी-भरी चीज़ नहीं देखूँगा, पत्तियों के रंध्रों से रिस कर उड़ने वाले जल की सूक्ष्म क्रिया नहीं देखूँगा, न सूक्ष्म रूप से वाष्प का आना-जाना ही देखूँगा। उस समय क्लोरोप्लास्टों की धूप से जगमगाते नन्हे कारखाने सड़कर मिट्टी में मिल चुके होंगे (क्लोरो-प्लास्ट अर्थात् पत्तियों के हरे जीव-कोश, जिनमें धूप में स्टार्च बनता है।)

तब भी आज की भाँति जीवन के सुन्दर, कोणीय और आवरणहीन यान्त्रिक उपकरण मेरे सामने खुले पड़े होंगे। किसी जंगली खरगोश का पतला, नीला-नीला अस्थिपंजर एक छोटे-से ढेर में लुढ़का हुआ होगा, जिसके ऊपर झुक कर, जैसा कि मैं इस समय करता हूँ, उसके विभिन्न अंगों के अद्भुत तालमेल पर, उद्देश्य-प्राप्ति के लिए अपने आपको परिस्थितियों के अनुकूल बना लेने के कौशल पर आश्चर्य कर रहा होऊँगा। मैं इस बात पर आश्चर्य करूँगा कि व्यक्तिगत इकाई के रूप में समाप्त हो जाने पर भी, उसकी अपनी रूपरेखा सदा बनी रहती है जो किसी अन्य पहाड़ी में किसी और खरगोश के रूप में फुदकती फिर रही होगी। मैं सदा की भाँति इस बात पर आश्चर्य करूँगा कि 'जीवन-कण' किस प्रकार ऐसी कठिन योजनाओं और अंगों का सुडौल सन्तुलन प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं। मैं एक बार फिर प्रश्न करूँगा कि किस प्रकार इस बात का प्रबन्ध हो जाता है कि साधारण धूल एक इतिहास बनाने लगती है और समय की धारा में अनूठे और फिर दुबारा कभी पैदा न होने वाली प्रेतछाया के इन आकारों को बुनना शुरू कर देती है। मैं इस बात पर आश्चर्य करूँगा कि पदार्थ के बीचों-बीच हृदय में स्थित वे

कौन-सी अनजान शक्तियाँ हैं जो खरगोश के हृदय की धड़कन को नियमित करती हैं? या मिल्कवीड झाड़ की फली के धुँधले स्वप्न को नियंत्रित करती हैं।

जो लोग इन बातों की जानकारी रखते हैं, उनका कहना है कि छोटे-से-छोटे जीव-कोश में शायद ढाई लाख से अधिक प्रोटीन-अणु होते हैं जो जीवन के आश्चर्य को पैदा करने वाली बहुमुखी और भली भाँति समन्वित गतिविधियों में लगे रहते हैं। मृत्यु के समय, चाहे वह मनुष्य की हो या किसी सूक्ष्म कीटाणु की, प्रोटीन-कणों की वह अद्भुत और अविश्वसनीय ढंग से व्यवस्थित प्रबल चक्राकार गति, स्वयं इन कणों को अव्यवस्थित, योजनाहीन मिट्टी में वापस पहुँचाने के लिए, लगभग पागलों की-सी हड़बड़ाहट के साथ समाप्त हो जाती है।

यदि अन्त में कोई जीवन के सबसे छोटे और सबसे दीन मन्दिर के द्वार की कुंजी घुमाने में सफल हो जाता है, तो भी मैं नहीं समझता कि इन प्रश्नों में से कुछ प्रश्न हल हो जायेंगे, या वे रहस्यमयी शक्तियाँ जो समुद्र की गहराइयों में प्रकाश की रचना करती हैं, और उष्ण कटिबन्ध के दलदलों में जीवित बिजली-बैटरियों का निर्माण करती हैं, या रोगाणुओं के भयानक चक्रों की सृष्टि करती हैं, या फिर मानव-मस्तिष्क की अद्भुत सुन्दर कार्यविधि का आयोजन करती हैं, प्रकट हो सकें तो बहुत होंगी। बल्कि मैं तो कहूँगा, यदि 'मृत' पदार्थ के अन्दर, इकतारा बजाते हुए टिड्डे, गाने वाली गौरैया, और आश्चर्यपूर्वक विचार करते मनुष्यों के अद्भुत दृश्यों का पोषण हुआ है तो यह बात एक कट्टर भौतिकवादी के समाने भी स्पष्ट हो जानी चाहिए कि जिस जड़ पदार्थ की वह चर्चा करता है, उसमें यदि भयावह नहीं, तो आश्चर्यजनक शक्तियाँ अवश्य हैं और हो सकता है, जैसा हार्डी ने कहा है यह असम्भव नहीं है, कि यह सम्भवतः "अन्तर्धान हुए उस महान् चेहरे द्वारा पहना हुआ अनेकों में से एक मुखौटा हो।"

लारेन एइज़ले (Loren Eiseley) अमरीका के नेब्रास्का राज्य में स्थित लिंकन शहर के निवासी हैं। वे एक ऐसे परिवार में पैदा हुए थे जो इस इलाके में, खेती-योग्य जमीन पर उस समय घर बना कर बसे थे, जब यह प्रदेश एक उपनिवेश था। प्रकृति के साथ उनका प्रथम परिचय, लिंकन के आस-पास, नमक के निचले मैदानों तथा तालाबों और नेब्रास्का-विश्वविद्यालय के अहाते में स्थित लाल ईंटों से बने संग्रहालय में रक्खी हुई प्रागैतिहासिक भीमगज की हड्डियों के द्वारा हुआ। नेब्रास्का में ए० बी० डिग्री लेने के बाद उन्होंने पेन्सिलवानिया-विश्वविद्यालय से, मानव-विज्ञान में स्नातक-परीक्षा का कार्य पूरा किया। वहाँ से लौटने के बाद वे कन्सास-विश्वविद्यालय में अध्यापक का काम करने लगे। बाद में वे ओहियो के ओबरलिन कालेज में समाज-विज्ञान और मानव-विज्ञान के विभागाध्यक्ष हो गये। इसके बाद १९४७ वे पेन्सिलवा-निया विश्वविद्यालय में, मानव-विज्ञान विभाग के अध्यक्ष का कार्यभार सँभालने, वापस आये। वे विश्वविद्यालय के संग्रहालय में, 'प्रारम्भिक मानव' के क्यूरेटर भी हैं।

डाक्टर एइज़ले ने कई विश्वविद्यालयों में व्याख्यान भी दिये हैं, जिनमें हारवर्ड, कोलम्बिया और कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय भी शामिल हैं। वे मानव-पुरातनविज्ञान के अमरीकी संस्थान के अध्यक्ष भी रह चुके हैं और कई प्रमुख वैज्ञानिक पत्रिकाओं, और अन्य पत्रिकाओं जैसे 'हारपर्स', 'अमेरिकन स्कालर' और 'जैन्ट्री' में लेख भी लिखते हैं।

उन्होंने कई वर्षों तक पश्चिमी संयुक्त राज्य अमेरिका में आरम्भिक उत्तर-हिमयुगीन मानव की खोज की है और विस्तृत रूप से ऊँचे मैदानों, पर्वतों और मैक्सिको-कनाडा सीमा के पास, राकीज पर्वतमाला के गिर्द रेगिस्तान में, काम किया है।